चन्दामामा
मार्च १९९०

It's crammed with answers.
It's a challenge to do-it-yourself.
It's an invitation to contests.
It's an exciting pull-out in each issue.

PRICE
Rs.5/-

To subscribe write to,
JUNIOR QUEST,
Dolton Agencies, Chandamama Buildings,
N.S.K. Salai, Vadapalani,
Madras: 600 026.

A Chandamama Vijaya Combines publication

A new monthly English children's magazine

फेंका-फेंकी का मज़ेदार नया खेल ...
फ़्रिस्बी
मुफ़्त
फ़्रिस्बी! चॉकलेट कॉम्प्लान के प्रत्येक ५०० ग्राम के पैक के साथ
कॉम्प्लान®
परिपूर्ण नियोजित आहार
Complan
लाल, पीली, हरी, नीली, अनेक रंगों में मिलती फ़्रिस्बी. फेंको-उड़ाओ, मौज करो. कॉम्प्लान फ़्लाइंग फ़्रिस्बी.
अब चुने हुए स्थानों में उपलब्ध.
GL/13 C/172 HIN

आप हमारे लिए विशेष प्रिय हैं, इस लिए यह खास योजना केवल आपके लिए । ये बढ़िया खिलौने सब से पहले आपके पास पहुँच रहे हैं । और जैसा कि आप जान पाए होंगे, इनका दाम बहुत कम! इसके अलावा एक और तरह से आप बचत कर सकते हैं । 'चन्दामामा' के वार्षिक चन्दे में अपने आप आपको सहूलियत मिलेगी । १२ प्रतियों के लिए ५ और, २४ प्रतियों के लिए १५ रु. की छूट!

प्रिय चन्दामामा

मैंने आपकी योजना ''डाक से खिलौना'' पढ़ी । और इन बढ़िया खिलौनों की ओर आँखें भर कर देखा ।
मुझे ये खिलौने भेजिए । (एक या अनेकों पर टिक लगाइए ।)

* बॉबिट * टेड्डी * जम्बो * बाउ-वाउ * पपा-खरगोश

मुझे मालूम हुआ कि 'चन्दामामा' के चन्दे में भी मुझे सहूलियत मिलेगी । नीचे लिखे अनुसार चन्दामामा का चंदा भेज रहा हूँ ।

* एक वर्ष (३६ रुपयों के ऐवज ३० रु.)
* दो वर्ष (७२ रुपयों के ऐवज ५७ रु.)
* माफ कीजिए । अभी मुझे 'चंदामामा' नहीं चाहिए ।

Note : This offer is valid

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

साहसी बालकों का सत्कार

गणतन्त्र दिवस के अवसर पर कुछ वीर बालकों का सत्कार किया गया। सत्कार-प्राप्त प्रत्येक बालक-बालिका ने अपने प्राणों की परवाह किये बिना दूसरों को खतरे से बचाने के लिये मदद की है।

भीड़ में खडे होकर नारे लगाना, धैर्य से बात करना, तथा किसी जरूरत के समय तत्सम्बन्धी कार्य में प्रवृत्त होना कुछ आसान है। क्योंकि ऐसे समय कोई खतरा उपस्थित हो, तो सामना करने के लिये, या मदद देने के लिये आसपास अन्य लोग होते हैं, इस बात का उन्हें पूरा विश्वास होता है। परन्तु, अकेले ही साहसिक कार्य के लिये प्रवृत्त होने में बड़े धैर्य की आवश्यकता होती है, त्याग की जरूरत होती है। निस्वार्थ भाव से दूसरों से प्यार करनेवाले साहसी व्यक्ति ही ऐसा साहस प्रदर्शित कर सकते हैं।

बालक-बालिकाओं में धैर्य व साहस को बढ़ावा देने के लिये ऐसे सत्कार अत्यन्त सहायक होते हैं। इस संदर्भ में सभी सत्कारप्राप्त बालक-बालिकाओं का हम हार्दिक अभिनन्दन करते हैं!

वर्ष : ४२ मार्च १९९० अंक : ७

एक प्रति : ३-०० :: वार्षिक चन्दा : ३६-००

समाचार

पनामा पर आक्रमण

पनामा में सैनिक शासन चलानेवाले हुकुमशाह जनरल अंटोनियो नोरियेगा को अपने पद से हटाने के लिए गत २० दिसंबर को अमेरिका ने पनामा पर आक्रमण किया ।

नोरियेगा के नेतृत्व में चुनाव में विरोधी दल के नेता एण्डोरा को विजय प्राप्त हुई । लेकिन नोरियेगा ने उनको अधिकार सौंपना स्वीकार नहीं किया, खुद ही शासक बन बैठा ।

नोरियेगा का यह कार्य दोषपूर्ण है ही । परंतु अमेरिका के इस आक्रमण को दुनिया के कई देशों ने इस लिए निंदनीय बताया कि दूसरे देश के अंतर्गत मामलों में दखल देने का अमेरिका को कोई अधिकार नहीं है ।

नोरियेगा केवल हुकुमशाह है यही नहीं, बल्कि पिछले छः वर्षों में अपना विरोध करनेवाले लोगों को उन्होंने बड़ी निर्दयता से कुचला और सताया भी । संसार के युवक-युवतियों के जीवन को बर्बाद करनेवाले नशीले पदार्थों के यातायात में उन्होंने करोड़ों रुपये कमाये और अपने अधिकार को अक्षुण्ण बनाये रखा । अमेरिका के समर्थकों का कहना है कि नोरियेगा के इस अत्यंत अनुचित कार्य को रोकने के लिए ही अमेरिका ने पनामा पर जो
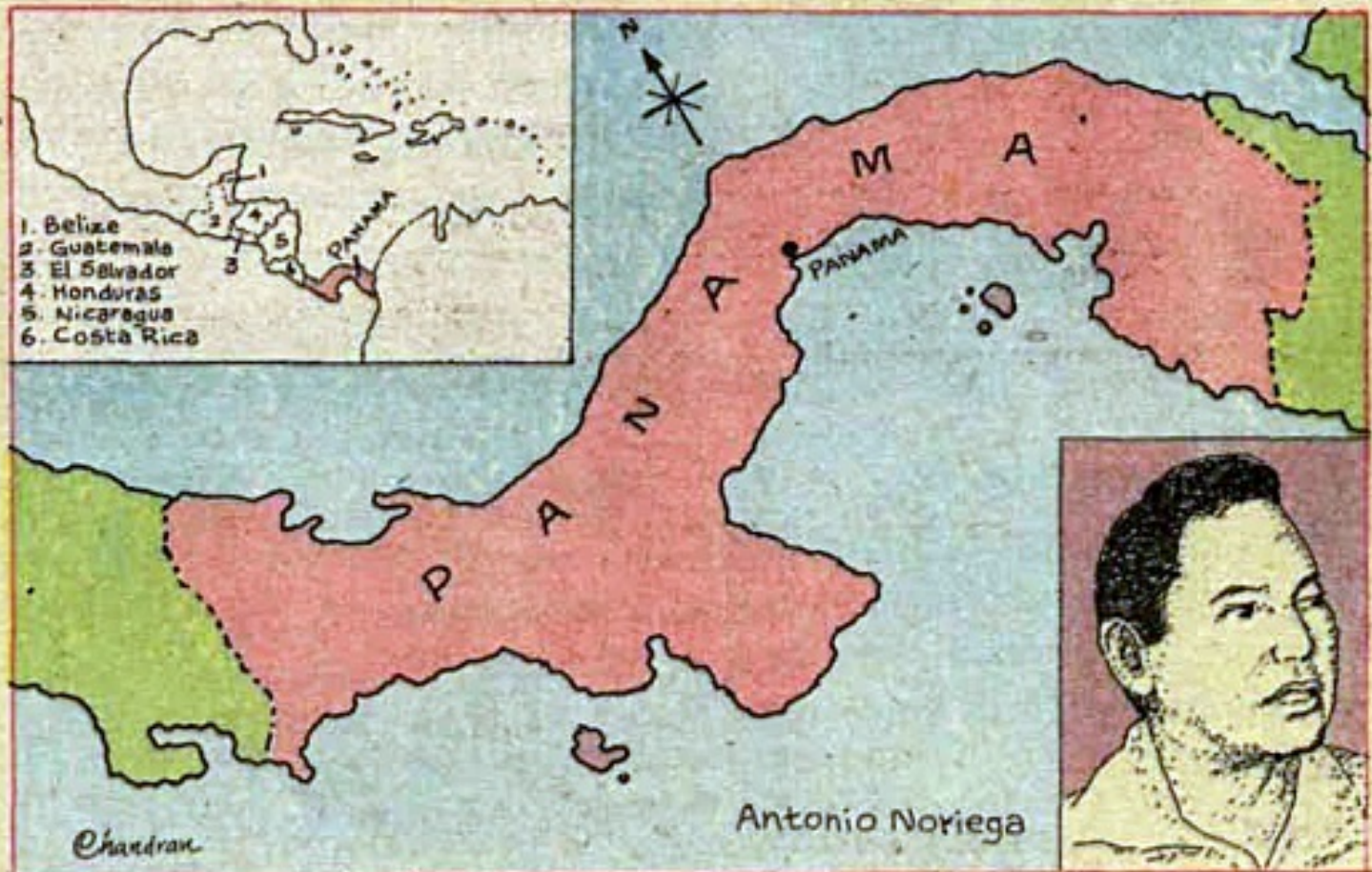
हमला किया वह उचित है ।

मध्य अमेरिका के सात देशों में एक देश पनामा है । गोटेमाला, एलु साल्वेडार, होण्डूरास, निकरागुवा, कोस्टारिका, बेलीज बाक़ी छः देश हैं । विषुव-वृत्तीय वायु-मंडलवाले हरे-भरे जंगलों के बीच बसे इस सुंदर पनामा देश में जहाँ-तहाँ और जब-तब अग्निपर्वतों के विस्फोट हुआ करते हैं । आंतरराष्ट्रीय समुद्री मार्ग में पनामा नहर का अपना विशेष महत्त्व है फिर भी वहाँ की बीस लाख जनता सुख और शांति का जीवन नहीं व्यतीत कर पा रही है । राजनैतिक नेताओं के आपसी संघर्ष के कारण लोग हमेशा दबाव के शिकार बने रहते हैं ।

नशीले पदार्थों से पिंड छुड़ाने के लिए दुनिया के सारे देशों को यथासंभव प्रयत्न करना होगा । वरना युवा पीढ़ी का ही नहीं, बल्कि सरकारों का भी पतन हो सकता है । पनामा का वृत्तान्त हम सब को इस बात की चेतावनी देता है ।

चंदामामा के सम्वाद

विश्व भर में संपन्न लोग

प्रत्येक व्यक्ति की प्राप्ति के हिसाब से देखा जाए, तो आज स्विट्झरलैंड में ही विश्व भर में ज़्यादा संपन्न लोग पाये जाते हैं । विश्व बैंक ने हाल-ही-में अपने प्रतिवेदन में यह समाचार प्रकट किया है ।

भूकंप की चेतावनी

लास एंजेलिस में तीन मित्रों ने मिल कर एक छोटे-से यंत्र को रूपायित किया है । इस यंत्र को घर में लगा दे, तो वह भूकंप के आने के पहले के मिनटों में चेतावनी के रूप में ध्वनि करता है । शीघ्र ही ये यंत्र कम दाम में उपलब्ध होनेवाले हैं ।

देवी की साड़ियाँ

गोवर्धन एक जौहरी के यहाँ नौकर था। एक बार अचानक उसकी नौकरी छूट गई। लाखों रुपये कमाने पर भी जौहरी के मन में समुद्री व्यापार करने का शौक़ बना रहा। उसे मालूम हुआ कि समुद्री व्यापार में कम समय में अधिक लाभ पाया जा सकता है। इस लिये उसने जौहरी का व्यवसाय बंद करने का निश्चय किया और समुद्री व्यापार शुरू करने की सब तैयारियाँ कर लीं। एक दिन वह परिवार के साथ उस गाँव छोड़ कर निकल पड़ा।

घर से निकलते समय जौहरी ने गोवर्धन के हाथ में एक हज़ार रुपये थमाते हुए कहा—"गोबर, तुमने बहुत दिन तक मेरे पास बड़ी ईमानदारी से काम किया। इस लिए मैं तुम्हें यह धन-राशी दे रहा हूँ। अपनी आजीविका के लिए अब तुम कोई और रास्ता ढूंढ़ निकालो। तुम अच्छा दिमाग रखते हो। अपना खुद का कोई व्यवसाय-धंधा शुरू करो। छोटे व्यापार के लिए यह धन-राशी पर्याप्त होगी। तुम अकेले होते, तो मैं तुम्हें अपने साथ ले जाता। तुम परिवारवाले ठहरे, इस लिए यहीं कुछ काम कर लो।"

गोवर्धन नौकरी छूटने के कारण दुखी हो घर लौटा। सब जान कर पत्नि गोमती ने उसे सांत्वना दी—"जो कुछ हो गया, सो हो गया। अब चिंता करने से क्या फ़ायदा भला? जो एक हज़ार रुपये मिले हैं, इस पूँजी से कोई व्यापार क्यों न करो?"

"मैं अपना निजी व्यापार शुरू करूँ? कैसा व्यापार करूँ? रास्ते में चलते मैंने कई व्यापारों के बारे में सोचा। पर मेरे मन में कुछ बैठ नहीं रहा है कि कौन व्यापार मैं सफलता के साथ कर पाऊँगा। तुम्हीं बताओ मैं कौन-सा व्यापार करूँ? अगर तुम भी मेरी

अलका अग्रवाल

मदद कर सको तो बहुत अच्छा होगा ।" गोवर्धन ने गोमती से पूछा ।

गोमती ने समझाया—"तुम सोमपुर से अच्छी ज़रीदार रंगीन साड़ियाँ खरीद लाओ । कुछ सफेद साड़ियाँ भी ले आना । देखना कि रंग कच्चा न हो । मैं उन साड़ियों पर सुंदर फूल और लताएँ काढूँगी । तब वे साड़ियाँ एकदम नए प्रकार की बन जाएँगी । शहर में अच्छे दाम पर ये साड़ियाँ बेची जा सकेंगी । घर घर जाकर इन साड़ियों को दिखाओ । औरतों को ये नये किसम की साड़ियाँ ज़रूर पसंद आएँगी । अगर उचित दाम पर बेची, तो खरीदार ज़रूर मिलेंगे ।"

पत्नी का सुझाव गोवर्धन को पसंद आया । वह सोमपुर जाकर साड़ियाँ खरीद लाया । गोमती ने उन पर बढ़िया कढ़ाई का काम किया ।

गोमती ने चाहा कि नए किस्म की इन साड़ियों के लिए कोई नया सुंदर नाम दिया जाए । उसने खूब सोचा, पर जो नाम सूझे, उनमें से एक भी उसे पसंद न आया ।

साड़ियों की गठरी बाँधते हुए गोमती ने पति से कहा—"अजि सुनो, मैं ज़रा ढंग से सोचकर इन साड़ियों के लिए एक बढ़िया नाम चुन लूँगी । तब तक तुम इन्हें शहर ले जाओ । नए क़िस्म की साड़ियाँ हाथों हाथ बिक जाएँगी ।"

गोवर्धन साड़ियाँ लेकर शहर पहुँचा । उसकी इन साड़ियों को लोगों ने हसरत भरी निगाह से देखा । पर किसी ने साड़ी खरीदी नहीं । इस डर से कि उन पर अंकित चित्र धुलने पर मिट जाएँगे और फिर ये साड़ियाँ भद्दी नज़र आएँगी । शाम तक गोवर्धन शहर में भटकता रहा, पर एक भी साड़ी बेच न सका । मन-ही-मन खीझकर अपने गाँव की ओर चल पड़ा ।

अपने गाँव के पहलेवाले गाँव तक गोवर्धन पहुँच ही रहा था, कि अंधेरा हो गया । वह थक गया था और अब आगे बढ़ना उसके लिए मुश्किल था । ज़रा आराम करने के विचार से पासवाले एक देवी के मंदिर के चबूतरे पर बैठ गया ।

लगभग आधा घंटा आराम करने के बाद गोवर्धन चबूतरे से उतर पड़ा और अपनी साड़ियों की गठरी सिर पर उठाने ही वाला था

कि देवी प्रत्यक्ष हुई। और उसने कहा—"गठरी के अंदर बहुत अच्छी साड़ियाँ दिखाई देती हैं!"

गोवर्धन को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। फिर सम्हलकर नम्रता के साथ बोला—"जी हाँ, माताजी! इन्हें बेचने के लिए शहर ले गया था, लेकिन मेरा दुर्भाग्य कि एक भी साड़ी नहीं बिकी।"

"ओह, यह बात है। दिखाओ, ज़रा मैं भी तो देख लूँ!" देवी ने कहा।

गोवर्धन ने गठरी खोल दी और देवी को एक एक साड़ी दिखाने लगा।

देवी ने साड़ियों को देखते हुए कहा—"देखो, मुझे यह रंग बहुत पसंद है। इसकी जरी और इस पर काढ़े फूल क्या ही बढ़िया है! मैं खुश हुई इन्हें देख!"

देवी ने अपनी साड़ी के फटे आँचल को दिखाते हुए गोवर्धन से कहा—"यह देखो, एक हफ़्ते पहले पुजारी ने मुझे यह फटी साड़ी पहना दी है। मेरे भक्तों को कितना दुख है कि मेरे लिए अच्छे वस्त्र नहीं हैं। तुम्हारी इन साड़ियों को देख मुझे बड़ा संतोष हुआ।"

"देवीजी, आप यह क्या कह रही हैं? भक्त लोग तो आपको बढ़िया से बढ़िया साड़ियाँ भेंट चढ़ाते रहते हैं न?" गोवर्धन ने पूछा।

देवी ने समझाया—"भक्त लोग जो साड़ियाँ भेंट चढ़ाते हैं, उनमें से अच्छी साड़ियाँ तो पुजारी की झगड़ालू पत्नी अपने लिए रख लेती है। इस लिए पुजारी लाचार हो घटिया क़िस्म की साड़ियाँ मुझे पहना देते हैं। मंदिर का न्यासी पुजारी की पत्नी का रिश्तेदार है, इस लिए पुजारी पर

अंध-विश्वास रख कर उसने मंदिर की सारी ज़िम्मेदारी पुजारी के हाथ सौंप दी है ।"

गोवर्धन ने देवी को प्रणाम किया और कहा—"माताजी, मेरा अहो भाग्य है कि आपने मेरी साड़ियों को पसंद कर लिया ।" अब गोवर्धन वहाँ से चलने को हुआ ।

तो देवी ने कहा—"सुनो, ज़रा रुक जाओ । क्या तुम साड़ियों का दाम लेना भूल गये? तुम सुबह न्यासी के घर जाओ और कहो—"देवीजी ने मुझ से दो हज़ार रुपये की साड़ियाँ खरीद ली है । उनका मूल्य आप दे देंगे?" तुमको अपनी रकम मिल जाएगी । चिंता मत करना ।
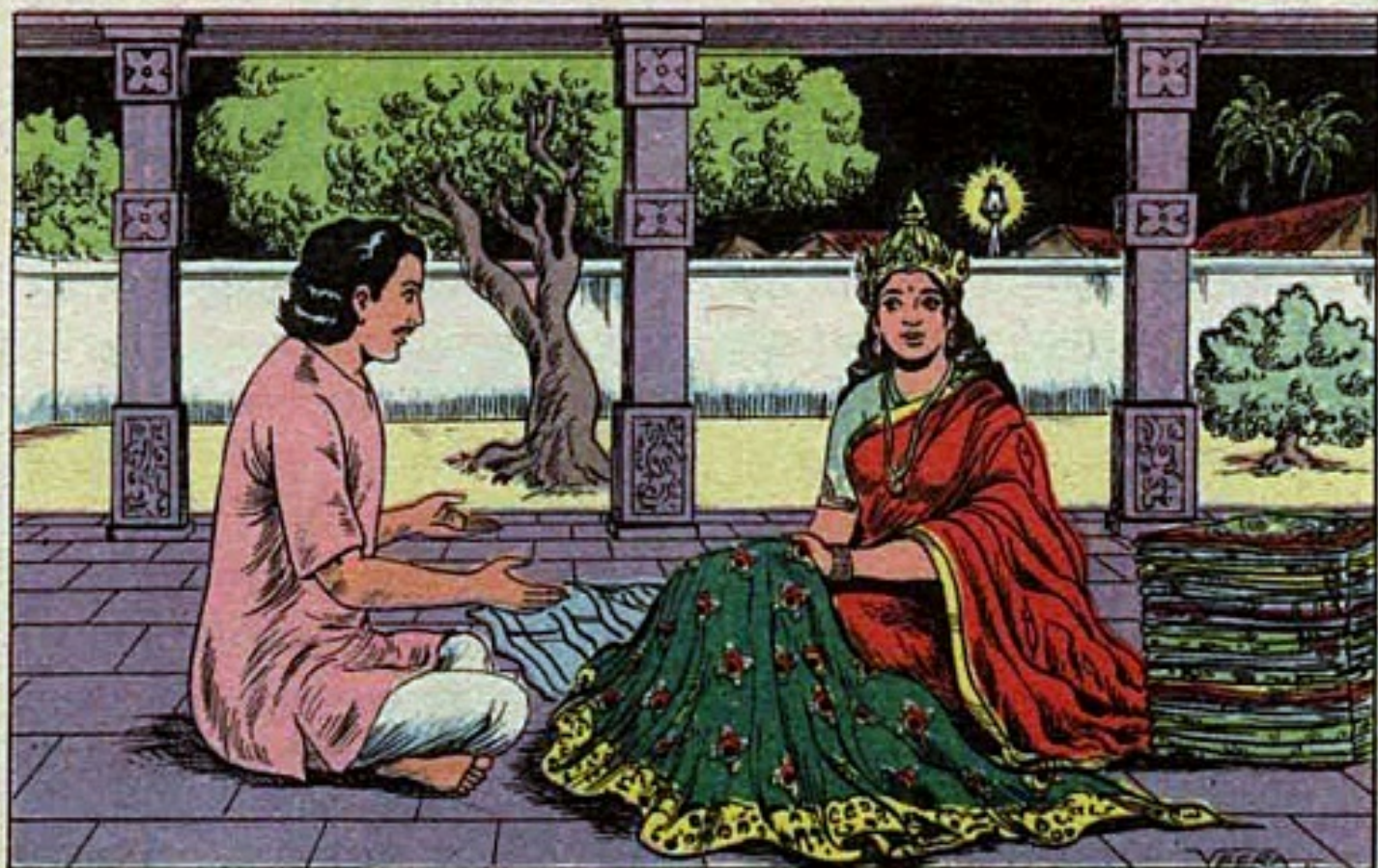
इसके बाद गोवर्धन बड़ी प्रसन्नता के साथ अपने घर पहुँचा । सारा समाचार सुन कर गोमती बहुत प्रसन्न हुई । उस रात पति-पत्नी जागते ही रह गये ।

सवेरा होते ही गोवर्धन मंदिर के न्यासी के घर पहुँचा और देवी के कथनानुसार निवेदन किया ।

न्यासी ने गोवर्धन को एक बार नख-शिखान्त देखा । और गुस्से में आकर पूछा—"तुम कहीं पागल तो नहीं हो गये हो? देवी ने तुम से साड़ियाँ खरीदी? क्या देवी तुम्हारे सामने प्रत्यक्ष हुई? पगले, भाग जाओ यहाँ से । बकवास मत करो ।"

मुस्कुराते हुए गोवर्धन ने कहा—"महाशय, पुजारी की करतूत के कारण देवी को अपने लिए स्वयं साड़ियाँ खरीदनी पड़ीं! क्या करें? कलियुग की महानता है सब!"

यह बात सुन कर न्यासी कुछ चिढ़ गया और तुरंत पुजारी के घर की ओर चल पड़ा । मंदिर के पास ही पुजारी का घर था । गोवर्धन भी न्यासी के पीछे चल पड़ा ।

सूर्योदय हो चुका था, फिर भी पुजारी गहरी नींद सो रहा था । न्यासी की पुकार सुन कर पुजारी जाग उठा और किवाड़ खोल कर बाहर आया ।

गोवर्धन की ओर इशारा करते हुए न्यासी ने पुजारी से पूछा—"देखो, यह कपड़े बेचनेवाला एक व्यापारी है । यह कहता है कि देवीजी ने पिछली रात इस से दो हज़ार रुपयों की साड़ियाँ खरीद लीं हैं । क्या तुम इसके बारे में कुछ जानते हो?"

"देवी ने साड़ियाँ खरीदीं? शिव, शिव!

पाप शांत हो! यह कोई पहुँचा हुआ डाकू मालूम पड़ता है! या गाँवों में भटकनेवाला कोई पागल होगा।" गुस्से में आकर पुजारी ने कहा।

गोवर्धन की ओर खीझ कर देखते हुए न्यासी ने पुजारी से कहा—"अभी इस बात का फ़ैसला हो जाना चाहिए। तुम अभी चलो और मंदिर के किवाड़ खोल दो।"

पुजारी ने मंदिर के दरवाज़े खोल दिये। और आश्चर्य से सब लोग क्या देखते हैं? देवीजी के चरणों के पास साड़ियों का ढेर पड़ा है। देवी ने स्वयं एक फटी-पुरानी साड़ी पहनी है।

तीक्ष्ण दृष्टि से देखते हुए न्यासी ने पुजारी से पूछा—"कल शाम को अपनी बेटी को ससुराल भेजते समय हमने देवी को एक ज़रीदार रेशमी साड़ी भेंट-स्वरूप दी थी। तुमने कहा था कि रात को पूजा के समय वही साड़ी तुम देवी को पहनाओगे। उस साड़ी का क्या हुआ, पुजारी?"

पुजारी मारे डर के काँप उठा। उसने लज्जा के मारे अपना सिर झुका लिया। इस पर गोवर्धन ने न्यासी से कहा—"महाशय, आपको यह प्रश्न पुजारी की पत्नी से पूछना चाहिए। आप पुजारी से पूछ रहे हैं! ये बेचारे क्या जवाब देंगे?"

थोड़ी देर विचार करने पर न्यासी की समझ में आ गया कि पुजारी कैसे दुर्व्यवहार करता है। न्यासी ने तुरन्त पुजारी को अपने पद से हटा दिया। और गोवर्धन को दो हज़ार रुपये इनाम देकर सादर रवाना किया।

कुछ ही क्षणों में यह ख़बर गाँव में और आसपास फैल गई। भीड़ बाँध कर जनता देवी के मंदिर में आ पहुँची और पूजा-अर्चना करने लगी। कुछ लोगों ने गोवर्धन के घर जाकर साड़ियों की माँग की—'हमें देवी की साड़ियाँ चाहिए।'

इस पर गोमती अत्यन्त प्रसन्न हुई। उसने पति से कहा—"अब हमारी साड़ियों के नामकरण की समस्या हल हो गई। जनता ने ही खुद उनका नामकरण कर दिया है—"देवी की साड़ियाँ!" हम कड़ी मेहनत में विश्वास करते हैं। अब देवी की कृपा से हमें किसी प्रकार की कमी न होगी।

परीक्षा

मुकुन्द नाम का एक युवक अपने घर के लिए आवश्यक चीज़ें खरीदने के लिए दूकान में गया । वहाँ ग्राहकों की बड़ी भीड़ थी । सब के चले जाने तक मुकुन्द रुक गया और फिर दूकानदार के हाथ में अपने को आवश्यक चीज़ों की सूची थमा दी ।

दूकानदार ने मुकुन्द को सारी चीज़ें दे दीं और प्रत्येक की क़ीमत भी बता दी । मुकुन्द ने रुपये दिये । दूकानदार ने अपनी चीज़ों का मूल्य लेकर बाकी पैसे वापस कर दिये ।

पैसे गिन कर मुकुन्द को बड़ा आश्चर्य हुआ । दूकानदार ने भूल से दस रुपये अधिक दिये थे । मुकुन्द ने दस रुपये वापस देते हुए दूकानदार को समझाया—"आपने ग़लती से मुझे दस रुपये अधिक दिये हैं । रुपये-पैसे के मामले में अधिक सावधान रहना चाहिए ।" फिर वह जाने को हुआ ।

मुकुन्द को रोकते हुए दूकानदार ने कहा—"तुमने ग़लती से सौ रुपये के बदले दो सौ रुपये दिये थे । पैसे के प्रति जो लोग लापरवाह होते हैं, वे ऐसी ग़लतियाँ कर बैठते हैं । ऐसे धन को वापस करने की अपेक्षा उसे किसी ग़रीब को दे देना कहीं अच्छा होता है । यही विचार कर मैंने तुम्हारी परीक्षा ली । मैंने तुमको जो दस रुपये अधिक दिए, उन्हें लेकर तुम अपने रास्ते चल देते, तो तुम्हारे दिए अधिक सौ रुपये मैं तुम्हें कभी न लौटाता । अब मैं तुम्हारी ईमानदारी पर अत्यंत प्रसन्न हूँ । तुम अपने सौ रुपये वापस ले लो ।" कहते हुए दूकानदार ने मुकुन्द को सौ रुपये लौटा दिये ।

6

[सेनापति वीरसिंह ने सुमेध राज्यपर अधिकार कर लिया । एक युवक के अपने राजा तथा राजपरिवार के हाल पूछने पर सिपाहियों ने उसे बन्दी बनाया । वृद्ध मन्त्री ने वीरसिंह को राजा के रूप में अस्वीकार किया, इसलिये उसकी हत्या का प्रबन्ध किया गया । मगर ऐन वक्त पर एक वीर ने वहाँ उपस्थित होकर मन्त्री की रक्षा की । आगे पढ़िये—]

अगले दिन सूर्योदय के समय राजोद्यान में वीरसिंह राजा शान्तिदेव की चाल का अनुकरण करते हुए इधर उधर टहल रहा था । मगर शान्तिदेव की चाल की शान उसे दूभर थी । शान्तिदेव हररोज़ सूर्योदय के समय प्रकृति के सौन्दर्य का अवलोकन करते हुएं अपार आनन्द का अनुभव करता था । वह प्रकृति का आराधक था, साथ ही उसके मन में किसी प्रकार का भय नहीं रहता था । इसी कारण उसकी चाल में गम्भीरता और आत्मविश्वास दर्शित होता था । मगर वीरसिंह के मन में प्रकृति के प्रति कोई प्रेम नहीं था । एक प्रकृति के ही प्रति क्यों; अपने आप को छोड़, विश्वभर में और किसीके प्रति भी उसे प्यार नहीं था । तिसपर, उसके मन में सदा यह भय छाया रहता था कि, न मालूम किस क्षण, किस ओर ख़तरा उपस्थित हो जाए! शान्तिदेव को वह क़त्ल नहीं कर पाया, वह कहाँ चला गया यह भी उसे मालूम न था । राज्यभर में अपना विरोध करनेवाले

कितने लोग हैं? वे मिलकर अपने विरुद्ध कोई षड्यन्त्र तो नहीं रचा रहे हैं?—ऐसी ऐसी शंकाओं से वीरसिंह पल-पल भीतर डरता रहता था। इन कारणों से उसकी चाल में स्थिरता नाममात्र भी नहीं थी।

कायर लोगों का हमेशा यही हाल होता है। उनमें आत्मविश्वास का अभाव रहता है। तिसपर उन्होंने कोई गलत काम किया हो, किसी को धोखा दिया हो, तब तो उनका अपराधी मन उनको अन्दर ही अन्दर कुरेदता रहता है। उन्हें दिन-रात चैन नहीं आता। रात को नीन्द से भी वे अचानक जाग पड़ते हैं और नीन्द से भी वे अचानक जाग पड़ते हैं और नीन्द पूरी न होने के कारण दिनभर अस्वस्थ रहते हैं।

वीरसिंह का यही हाल था। जिस शान्तिदेव ने उसे अपना रिश्तेदार जानकर सेनापति-पद दिया था और अपना मित्र बनाया था, उसे ही उसने धोखा देकर राज्य-पद से हटाया था। यह राज्य-लोभ ही अब उसका शत्रु बन बैठा था। शान्तिदेव के शासन में प्रजा सुख-चैन से रहती थी। राजा का अपने प्रति प्यार देखकर जनता को भी राजा और उसके परिवार से अत्यधिक प्यार था। तभी तो राजकुमार का जन्म-दिवस मनाने और उसे आशिर्वाद देने, उसका शुभचिन्तन करने सारे लोग राजमहल की ओर आये थे। उसे राजा को धोखा देने पर प्रजा थोड़े ही चुप रहेगी? अभी तो केवल वीरसिंह और उसके पक्ष के लोगों से डरने कारण ऊपर से वह कुछ शान्त लग रही थी। मगर कोई न कोई षड्यन्त्र कभी भी उपस्थित हो सकता था।.....ऐसे ऐसे विचारों में वीरसिंह लीन था। इतने में....

"महाप्रभु!" कोतवाल ने समीप आकर वीरसिंह को पुकारा।

"क्या बात है?" वीरसिंह ने पूछा।

"प्रभु, जो बात होनी नहीं चाहिये थी, वह हो गयी है।" कोतवाल ने जवाब में कहा।

"बात क्या है, स्पष्ट बता दो न?" वीरसिंह गरज उठा।

चारों तरफ नज़र दौड़ा कर कोतवाल ने पहले निश्चित कर लिया, कि अपनी बातें सुननेवाला कोई समीप नहीं है। तब उसने कहा, "वृद्ध मन्त्री हमारे सिपाहियों से बचकर

भाग निकले हैं।"

"क्या कहा? मन्त्री बचकर भाग निकले? इसका मतलब है, कि तुम ने असमर्थ लोगों को नियुक्त किया था। यही है न? मन्त्री छूट ही कैसे गया?" क्रोध में आकर वीरसिंह ने पूछा।

"यह बात बताने के लिये उनमें से कोई भी सिपाही ज़िन्दा नहीं है। वे तीनों मारे गये हैं।" कोतवाल ने धीरे से कहा।

"छी, छी! तुम ने तो एकदम कायरों को नियुक्त किया उस काम पर!" वीरसिंह ने कोतवाल को डाँटा।

"प्रभु! आप मुझे क्षमा करें। वास्तविक समाचार तो मैं नहीं जानता। लेकिन सबेरे हमारी नगर-सीमा पर तीन सिपाहियों के शव पड़े हुए मिले। यह बात तो निश्चित है कि, मन्त्री ने वे वध नहीं किये हैं; क्यों कि, मन्त्री-महोदय को तलवार चलाते हम ने कभी देखा ही नहीं है। और इतना वृद्ध आदमी तीन हट्टे-कट्टे वीर योद्धाओं का संहार करे, यह विश्वास करने योग्य बात नहीं है। यह काम ज़रूर किसी और व्यक्ति का होगा।"

"तब फिर किसने किया होगा, बताओ।" वीरसिंह ने अस्वस्थ होकर पूछा।

"इसका राज तो मालूम नहीं हो रहा है। पता करने के लिये मैंने भेदियों को नियुक्त किया है।" कोतवाल ने जवाब दिया।

वीरसिंह थोड़ी देर मौन खड़ा रहा। फिर मुठ्ठे कस कर बोला, "हमें इस खतरे को

जड़सहित उखाड़ना होगा। इसे ऐसे ही बढ़ने दिया तो वह हमारे प्राणों का संकट बन जाएगा। ऐसा लगता है कि हमारे विरुद्ध कोई षड्यन्त्र रच रहा है। षड्यन्त्रकारी एक होकर हमारा सामना करने से पूर्व ही हमें उनका अन्त करना होगा।..... अरे हाँ! कल हमारे सिपाहियों से शान्तिदेव के सम्बन्ध में पूछनेवाला वह युवक कहाँ है? वह भी षड्यन्त्रकारियों में से एक होगा ज़रूर।"

"उस युवक का नाम वसंत है प्रभु। लेकिन वह षड्यन्त्रकारी जैसा नहीं लग रहा है। वह केवल आप के द्वारा राज्य शासन करने पर विरोध प्रकट कर रहा है।" कोतवाल ने अभिप्राय प्रकट किया।

"बेमतलब की बात मत करो। यदि वह षड्यन्त्रकारी नहीं है, तो हमारे अधिकार को

चुनौती देकर विरोध प्रकट करने की हिम्मत उसमें कैसे आएगी? उसको खूब सताओ, तब वह सच्ची बात उगलेगा।"

"प्रभु! हम ने उसे अनेक प्रकार से सताया, लेकिन उसका कोई फल नहीं मिला।" कोतवाल ने कहा।

"तब तो उसको तुरन्त मार डालो। उस दुष्ट को नगर के प्रमुख रास्तों से खींचते ले जाओ। नगर के लोगों को मालूम हो कि शासन के विरुद्ध आन्दोलन करने का परिणाम क्या होता है। सार्वजनिक स्थान पर फाँसी चढ़ा दो उस वसन्त को! देखकर सारी जनता दहशत से काँप उठेगी।" वीरसिंह ने आदेश दिया।

'हाँ' में सिर हिलाकर कोतवाल वहाँ से चला गया।

तुरन्त ढिंढ़ोरा पिटवाया गया कि राजा का विरोध करनेवाले वसन्त को फाँसी की सज़ा सुनाई गयी है। नगर के समीप के मैदान में उसे फाँसी चढ़ाने का सारा प्रबन्ध किया गया।

उसी दिन दोपहर कारागार से नगर के सारे प्रमुख मार्गों पर वसन्त को जूलूस में ले जाया गया।

नगर की जनता की दृष्टि आकृष्ट करने के लिये, उस समय कोतवाल भडकीले रंग की पोशाक धारण कर, एक मज़बूत अरबी घोड़े पर सवार होकर जुलूस के आगे चलता हुआ चिल्लाता रहा, "दूर हट जाओ, हट जाओ सब!" उस की प्रबल कामना थी, कि नगर की प्रजा वसन्त का मृत्युदण्ड देखकर भी भयभीत न हो जायें, पर उसके बड़प्पन को देख वे उसकी प्रशंसा ज़रूर करें। लेकिन उस वक्त अचानक कुहरा छा गया, और

जनता कोतवाल को स्पष्ट देख नहीं पायी। इस पर वह बहुत ही निराश हुआ।

कोतवाल के घोड़े के पीछे हाथ बँधा हुआ वसन्त, और उसके दोनों तरफ दो सैनिक चल रहे थे। उनके पीछे भी कुछ सशस्त्र सैनिक चल रहे थे। वसन्त एकदम गम्भीर वदन से चल रहा था।

वैसे रास्ते में जनता की कोई रुकावट नहीं थी, फिर भी जनता का ध्यान आकृष्ट करनेके लिये कोतवाल बार बार 'दूर हटो' का नारा लगा रहा था।

इतने में किसी ने हठात् कोतवाल को घोड़े पर से ज़ोर से ढकेल दिया। वह धडाम् से नीचे गिर गया और हाथ पाँव चलाते छटपटाने लगा। दूसरे ही पल किसीने बिजली की गति से वसन्त के हाथों का बन्धन तलवार से काट डाला।

वसन्त ने पीछे मुड़कर देखा—एक नक़ाबवीर कह रहा था, "तुम तुरन्त मेरे पीछे घोड़े पर बैठ जाओ।" एक ही छलांग में वह नकाब-वीर अपने घोड़े पर सवार हुआ और उसने लगाम थाम लिया। वसन्त भी तुरन्त छलांग लगाकर उसके पीछे बैठ गया और घोड़ा तेज़ गति से दौड़ता हुआ वहाँ से अदृश्य हो गया।

यह सारा इतना अचानक और बिजली की गति से हुआ, कि बाकी सिपाही भय और सम्भ्रम में जडवत् खड़े के खड़े रह गये। मगर कोतवाल की कराह सुनकर वे होश में आ गये। उसके समीप जाकर उसे आधार देकर सिपाहियों ने धीरे से खड़ा कर दिया।

"मुझे घोड़े से किसने गिरा दिया? मेरा घोड़ा कहाँ है?" कराहते हुए घबराए शब्दों में कोतवाल ने पूछा।

"घोड़ा तो भाग गया है ।" सिपाहियों ने उत्तर दिया ।

"क्या भाग गया?" कोतकाल ने आश्चर्य प्रकट किया ।

"कैदी भी छूट गया है ।" दूसरे एक सिपाही ने कहा ।

"कैदी छूट गया? तब तो मेरा भी काम तमाम हुआ समझो ।" चीखकर कोतवाल अपनी कमर को थमाते हुए पीड़ा से कराहने लगा ।

इधर नकाब-योद्धा ने अरण्य के बीच पहुँच कर एक गुफा के सामने अपने घोड़े को रोका । दोनों घोड़े पर से उतर पड़े ।

"आप यदि ठीक समय वहाँ न पहुँचते, तो अब तक मेरे प्राण उड़ जाते ।" कहते हुए हाथ जोड़कर वसन्त ने नकाब-धारी योद्धा को प्रणाम किया ।

"बात सच है; लेकिन तुमने कौनसा अपराध किया था, जो तुम को मृत्युदण्ड दिया जा रहा था?" तीसरे ने पूछा ।

"महाराज शान्तिदेव और उनका परिवार कहाँ है? रातोरात सेनापति राजा कैसे बन गये? —ये प्रश्न मैं ने ढिंढोरची से पूछे । बस, मेरे प्रश्नों के उत्तर दिये बिना ही सिपाहियों ने मुझे बन्दी बनाया । इसके बाद सुना, कि रात को किन्हीं अज्ञात व्यक्तियों ने तीन सिपाहियों का वध कर डाला इसलिये मुझही पर आरोप लगाया गया कि वध करनेवाले उन व्यक्तियों से मेरा कोई सम्बन्ध ज़रूर है और वीरसिंह को सिंहासन से हटाने के लिये मैं षड्यन्त्र कर रहा हूँ । इसीलिये मुझे मृत्युदण्ड सुनाया गया ।" वसन्त ने कहा ।

"हाँ, मगर राजा शान्तिदेव के साथ कुछ भी हुआ हो, तुम्हें उससे क्या मतलब? उनके प्रति तुम्हारे मन में ऐसा प्रेम क्यों है?" नक़ाबधारी ने पूछा ।

"महाराज शान्तिदेव ने जनता को पुत्रवत् प्रेम दिया । वे अत्यन्त दयालू हैं । ऐसे धर्मात्मा पर क्या बीत रही है, यह जान लेना, क्या हमारा कर्तव्य नहीं है? इसके अलावा, यह वीरसिंह बहुत ही दुष्ट है । अधिकार पाने के बाद, घमण्ड में आकर जनता को वह तरह तरह से सता रहा है ।" वसन्त ने जवाब दिया ।

"तुम्हारा कहना तो बिलकुल ठीक है; हमें उस दुष्ट का अन्त करना होगा । अकेले नहीं, सब
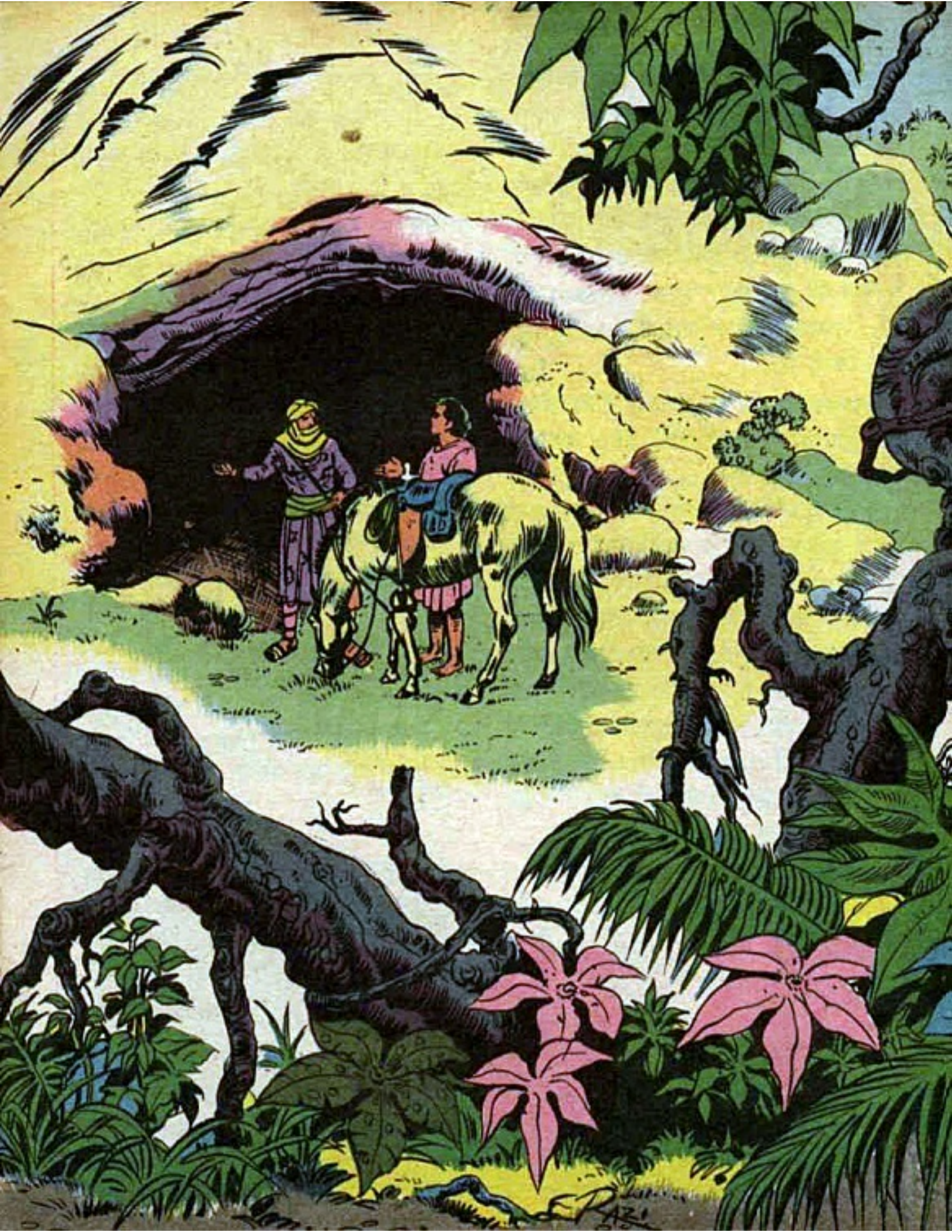
मिलकर! उसके शत्रुओं को हमें इकठ्ठा करना होगा । अगर इस समय हमने अपना कर्तव्य नहीं किया तो यह बड़ी भारी भूल होगी । दुष्टों को शासन करने देना एक पाप है । हम भला उस पास के भागी क्यों हों? हमें इस दुष्ट का डट कर मुकाबला करना चाहिए! अन्याय को चुपचाप सह लेना कायरता है ।" नकाबवीर ने गंभीरता से अपना विचार प्रकट किया ।

वसन्त ने इसपर पूछ लिया, "तो क्या, पिछली रात को उन तीन सिपाहियों का वध आप ही ने किया था?"

"जी हाँ, लेकिन मेरा उद्देश्य उनका वध करना नहीं था । वे वृद्ध मन्त्री का वध करने ही वाले थे । उसी क्षण अगर मन्त्री को बचाना हो, तो उनका संहार करना अपरिहार्य था; इसीलिये मुझे ऐसा करना पड़ा । सही बात यह है कि, अधिकारियों के आदेश का पालन करनेवाले अबोध सिपाहियों को मार डालना मुझे उचित नहीं लगता । आज किसी के प्राण हरण किये बिना ही मैं तुम्हारी रक्षा कर सका, इस पर बड़ा सन्तोष है । कायर लोग ही अबोध और असहाय्य लोगों पर तलवार चलाते हैं । हम एक महान् कार्य साधने के लिये कृतसंकल्प हैं । इसलिये हमें साहसपूर्वक लड़ना होगा ।" इतना कहकर नकाब-वीर गुफा के अन्दर चला गया और कुछ मीठे फल लाकर उसने वसन्त को दे दिये । इसके बाद उसने वसन्त को उस अरण्य से अमृतपुरी पहुँचने का मार्ग समझाकर कहा, "तुम अब अमृतपुरी चले जाओ । अब अमृतपुरी हमारे कार्य का केन्द्र होगा । दुष्ट वीरसिंह का मुकाबला करने के लिए संगठित होकर हमें जो योजना बनानी है, वह अमृतपुरी में बनेगी । मैं अपने कुछ और मित्रों को वहीं भेज रहा हूँ । नगर की पश्चिम सीमा पर जो महाकाली का मन्दिर है, वहाँ पहुँचकर मेरा इन्तज़ार करो, हम वहीं मिलेंगे । वहाँ और जो लोग पहुँचेंगे, उनका भी तुम स्वागत करो । मेरे वहाँ पहुँचने तक महाकाली का मंदिर मत छोड़ना ।" फिर घोड़े पर सवार होकर नकाब-वीर कहीं चला गया ।

(क्रमशः)

छद्मवेष

दृढव्रती विक्रमार्क वृक्ष के पास लौट आये, वृक्ष से शव उतारा और उसे कंधेपर लाद कर सदा की भाँति मौन होकर स्मशान की ओर चलने लगे। तब शव में वास करनेवाले बेताल ने उनसे पूछा, "राजन्, मुझे शक हो रहा है, कि आप अपना राज्य कुछ समय के लिये किसी दूसरे राजा के हाथ सौंपकर इस प्रकार स्मशान में अपना समय बिता रहे हैं। मेरा यह अनुमान अगर सच है, तो यह भी संभव है, कि आपने जिस व्यक्ति के हाथ अपना राज्य सौंपा है वह आप की अनुपस्थिति में बेईमान होकर आप को दगा दे दे! इस बात के उदाहरण में मैं आप को नन्दीवर्धन की कहानी सुनाता हूँ। सुनते सुनते शायद आप अपने श्रम भी भूल जायेंगे।"

बेताल कहानी सुनाने लगा।–

मणिमेखला राज्य के राजा धर्मचन्द्र अपने नाम जैसे ही बड़े धर्मात्मा थे। उनके शासन

बेताल कथा

थी । भविष्य में जनता के कल्याण के लिये किस प्रकार की योजनाएँ बनायी जाएँ इस बात पर वह विचार करता रहता था । अपने पिता के द्वारा किए गए कार्य को वह शीघ्र गति से और बढ़ाना चाहता था । अन्य प्रगतिशील देशों में जनकल्याण के लिए जो योजनाएँ कार्यान्वित होती थीं, उनका वह बरीकी से अध्ययन करता रहता । उसी हालत में, विवश होकर उसने अपने राज्याभिषेक के लिये स्वीकृति दे दी ।

राज्याभिषेक के थोड़े ही दिन बाद धर्मचन्द्र का स्वर्गवास हुआ । नन्दीवर्धन शासन अत्यन्त समर्थता पूर्वक चलाने लगा । लेकिन जब-तब उसे अपने भूतकालीन एकाकी जीवन का स्मरण हो आता और वही जीवन उसे अच्छा प्रतीत होता । राज्यशासन के कामों में उसे विशेष रुचि न थी । कुछ अनिच्छा से ही वह राजकाज के मामलों में ध्यान देता था ।

एक दिन जब राजा नन्दीवर्धन अपने विश्राम गृह में था, एक युवक उनके दर्शन करने आया, और कहने लगा, "महाराज, मेरा नाम विश्वकर्म है । मैं छद्मवेष धारण करने में माहिर हूँ । चाहे तो मेरी परीक्षा लेकर अपने दरबार में मुझे कोई नौकरी दीजिये । मैं किसी का भी वेष धारण कर उसकी हू-ब-हू नकल कर सकता हूँ । मेरी इस कला का आप खूब अच्छी तरह उपयोग कर सकते हैं ।

आप एक बार मुझे मौका दीजिए । अगर मैं

में जनता सुखी व सम्पन्न थी । उन्होंने अपने राज्य-काल में जनता के कल्याणकारी विविध कार्यक्रम शुरू किये । यात्रियों की सुविधा के लिए स्थान स्थान पर धर्म शालाएँ बनवाईं । उनके राज्य में चोर-डाकुओं का अभाव था । अगर कोई ऐसा कुकर्म करता पाया जाता, तो उसे कड़ी-से-कड़ी सज़ा दी जाती । धर्मचन्द्र जब वृद्ध हो गये तब अपना राज्य पुत्र नन्दीवर्धन को सौंपकर खुद विश्राम करने की बात उन्हों ने सोची ।

लेकिन नन्दीवर्धन को अपने पिता का यह निर्णय कुछ असुविधाजनक प्रतीत हुआ । वह उस समय तक अपना अधिकांश समय राज्य-शासन संबंधी राजनैतिक कार्यों और अर्थशास्त्र का अध्ययन करते हुए बिता रहा

आप के काम का सिद्ध न हुआ, तो आप मुझे कभी भी जाने को कह सकते हैं।"

नन्दीवर्धन ने उसकी परीक्षा ली। विश्वकर्म पड़ोसी राजा सिंहभूपति का, मणिमेखला के सेनापति विक्रम का तथा मन्त्री सुबुद्धि का वेष धारण करने में सफल रहा। उसका रूप, बोलने की रीति आदि हूबहू उन उन व्यक्तियों के अनुरूप देखकर नन्दीवर्धन विस्मय में आ गया।

राजा के आदेश पर विश्वकर्म ने खुद नन्दीवर्धन का वेष भी धारण किया। उसके वार्तालाप का ढंग, चलना और स्वरूप भी सही सही उसी के जैसा देख, राजा दंग रह गया। राजा को लगा कि यह कलाकार अपने पास हो तो कई प्रकार से उसका उपयोग किया जा सकता है। ऐसे कलाकार तो मुश्किल से ही उपलब्ध हो सकते हैं। यह स्वयं अपने पास चला आया है, उसे छोड़ देना ठीक न होगा।

विश्वकर्म का अभिनन्दन करके नन्दीवर्धन ने कहा, "तुम जैसे कुशल व्यक्ति का मेरी राजसभा में होना हमारे राज्य के लिये गौरव की बात होगी। थोड़े दिन तुम यहीं रहो, तुम्हारे लिए अच्छी सी नौकरी का इन्तज़ाम मैं करूँगा।"

इसके बाद राजा ने गुप्त रूप में विश्वकर्म के बारे में जानकारी हासिल की। उसे मालूम हुआ, कि विश्वकर्म बुद्धिमान व ईमानदार इन्सान है। यह समाचार मिलने के बाद नन्दीवर्धन के मन में एक विचार आया—विश्वकर्म को उसका वेष धरवाकर सिंहासन पर बिठाया जाय तो वह खुद
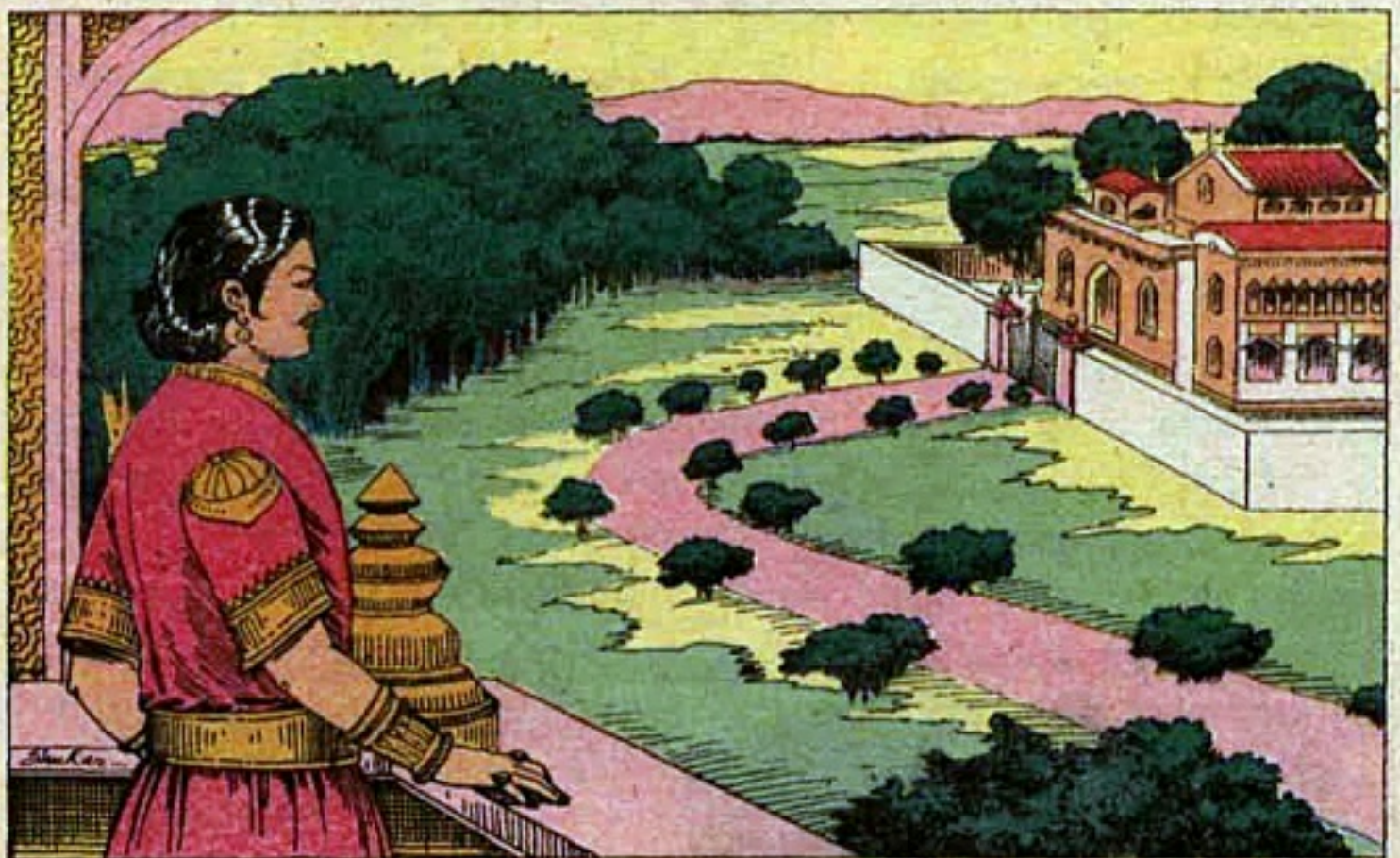
निश्चिन्त होकर एकान्त में जनता के कल्याण सम्बन्धी योजनाओं पर विचार कर सकता है ।

नन्दीवर्धन के अपना यह विचार प्रकट करने पर विश्वकर्म ने कहा, "महाराज, आप की प्रसन्नता के लिये मैं कुछ भी करने को तैयार हूँ ।"

इसके बाद राजा नन्दीवर्धन ने अन्तःपुर से दूर एक अलग महल बनवाया । उसका पहरा देने के लिये वफ़ादार नौकरों को नियुक्त किया गया । नन्दीवर्धन ने विश्वकर्म को शासन संबंधी व्यवहारों से अवगत कराया और साथ ही किसी के साथ कब और कैसे पेश आना चाहिये, यह भी समझा दिया ।

बाद में एक दिन नन्दीवर्धन विश्वकर्म को साथ लेकर अपने विशेष महल में पहुँचा और बाहर निकलते वक्त विश्वकर्म राजा नन्दीवर्धन के वेष में बाहर आकर अंतःपुर में चला गया । खुद नन्दीवर्धन के वेष में ही रह गया ।

दूसरे दिन नन्दीवर्धन का वेषधारी विश्वकर्म राजसभा में गया । किसी को भी उसपर शक नहीं हुआ । विश्वकर्म ने जनता की समस्याओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करके थोड़े ही दिनों में जनकल्याण सम्बन्धी कुछ योजनाएँ बनायीं और उन्हें अमल में लाने के लिये योग्य अधिकारी नियुक्त किये ।

पूर्व ही निश्चित किये कार्यक्रम के अनुसार दो महीने बाद राजा बना विश्वकर्म नन्दीवर्धन को मिलने गया ।

नन्दीवर्धन ने उससे कहा, "विश्वकर्म, तुम इस विशेष महल में ही रह जाओ । मैं बाहर जाकर पता करूँगा कि तुम्हारे शासन के बारे में जनता का क्या विचार है ।"

अब राजमहल में पहुँचे नन्दीवर्धन से मिलने के लिये मन्त्री सुबुद्धि आ पहुँचा और बोला, "महाराज, आज सुबह ही मैं ने गुप्तचरों द्वारा देश की हालत के बारे में समाचार जान लिया है । इधर, पिछले दो महीनों में आप ने जो निर्णय लिये हैं, वे जनता की प्रशंसा के पात्र बन रहे हैं ।"

इसके बाद नन्दीवर्धन फिर अपने विशेष महल में गया और विश्वकर्म से बोला, "देखो विश्वकर्म, मैं चन्द दिन और इसी विशेष महल में रहना चाहता हूँ । तुम पहले की ही

भाँति शासन कार्य निबटाते रहो ।"

चार महीने और बीत गये । इस बीच विश्वकर्म ने जनता के अभ्युदय संबंधी कार्यक्रमों में अद्‌भुत प्रगति कर ली । नये रूप से धर्मशालाएँ बनवायीं, हर गाँव में पाठशालाएँ शुरू करवायीं, खेतीबाड़ी के लिये सिंचाई-योजनाओं में वृद्धि की । देश में सर्वत्र राजा की प्रशंसा होने लगी ।

परन्तु, इसी हालत में एक और घटना घटी । वह यह कि, जनता को मालूम हो चुका कि आजकल राज्य शासन करनेवाला व्यक्ति राजा नन्दीवर्धन न होकर उसीका वेषधारी विश्वकर्म है । असली राजा अपने विशेष महल में अपता समय बिता रहा है ।

जनता अब इस आशय का आन्दोलन करने लगी कि, अपने दायित्व को तिलांजली देकर स्वतन्त्रापूर्वक अपना समय बितानेवाले राजा नन्दीवर्धन की अपेक्षा विश्वकर्म ही हमारा शासन करने में ज़्यादा समर्थ है और भविष्य में वही राज्य का भार सँभाले ।

जनता के बीच अपनी इस बदनामी से नन्दीवर्धन को अत्यन्त मानसिक क्लेश हुए । उसने विश्वकर्म से कहा, "सुनो विश्वकर्म, जनता में पहले मेरा जो यश फैला हुआ था, वह तुम्हारी वजह से मिट्टी में मिल गया । तुम ने इस प्रकार छद्‌मवेष धारण न किया होता तो मेरी यह बुरी हालत न होती ।"

इस पर विश्वकर्म ने कहा, "महाराज, मैं ने यह जो छद्‌मवेष धारण किया है, उसी के कारण जनता में आप के प्रति असंतोष फैल गया है—ऐसा अगर आप सोचते हैं, तो यही समझना पड़ेगा, कि आप केवल स्वार्थी हैं ।"

सभा मंडप में उपस्थित हो जाए ।

सभा को संबोधित कर नन्दीवर्धन ने कहा, "मुझे मालूम है कि, जनता के विचार में मैं ने अपने दायित्व का विस्मरण किया है । मैं जनता के फैसले को सर आँखोंपर करने के लिये तैयार हूँ । आज से विश्वकर्म ही राज्य का भार वहन करेगा ।"

राजा की बातें सुनकर सब ने स्वीकृति सूचक तालियाँ बजायीं । तब नन्दीवर्धन ने विश्वकर्म से कहा, "जनता का अभिप्राय व्यक्त हो चुका है; तुम अब सिंहासन पर आरूढ़ हो जाओ ।"

इसे अस्वीकार करते हुए विश्वकर्म ने सभासदों के सामने निवेदन किया, "महाराज ने अपने दायित्व के विरुद्ध व्यवहार कभी नहीं किया है । इधर थोड़े समय पूर्व से मेरे द्वारा जो योजनाएँ अमल में लायी गयी हैं वे सारी राजा की सलाह से कार्यान्वित हुई हैं । राज्य शासन का कार्य मेरी शक्ति के बाहर की बात है । आप लोग मुझे क्षमा करें ।"

विश्वकर्म के मुँह से ये बातें निकलते ही सभी सभासदों ने एक स्वर में हर्षध्वनियाँ कीं, "महाराजा नन्दीवर्धन की जय ।"

"अब आप लोगों ने समझ ही लिया होगा, कि सिंहासन भी त्यागनेवाला यह विश्वकर्म कितना योग्य व्यक्ति है । आज से मैं इसे 'अन्तरंग सलाहकार' के रूप में नियुक्त कर रहा हूँ ।" मौक़े का लाभ उठाते हुए नन्दीवर्धन ने झट जाहिर किया ।

जनता ने तुरन्त ही इस बात को अपनी

विश्वकर्म का यह आरोप सुनकर नन्दीवर्धन ने कुपित होकर कहा, "जनता का क्रोध मेरा क्या बिगाड़ सकता है? उनके चाहने मात्र से मेरा सिंहासन त्यागना और तुम्हारा राजा बनना क्या संभव होगा?"

"महाराज, आप मुझे क्षमा कर दीजिये । मैंने आप से जो कहा है, उस पर आप शान्ति से सोचिये ।" विश्वकर्म ने विनम्रता से कहा ।

इसके बाद नन्दीवर्धन राजमहल में चला गया और आगामी कार्यक्रमों पर खूब सोच कर एक निर्णय पर पहुँचा ।

दूसरे दिन राजा नन्दीवर्धन ने सारे राज्य भर में ढिंढ़ोरा पिटवाया कि, देश के सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति और नगर के प्रमुख व्यक्ति

स्वीकृति दे दी । इसके बाद सभा विसर्जित कर नन्दीवर्धन विश्वकर्म को साथ लेकर अपने विशेष महल में चला गया । रास्ते में विश्वकर्म ने राजा से कहा, "महाराज, आप बहुत ही निस्वार्थ व्यक्ति हैं ।"

नन्दीवर्धन मुस्कुराकर मौन रह गया ।

यह कहानी सुनाकर बेताल ने पूछा, "राजन्, विश्वकर्म ने बड़ी सरलता से सिंहासन क्यों त्याग दिया? क्या इसलिये, कि राज्य-शासन असल में उसके बूते के बाहर की बात है? उसने एक बार राजा नन्दीवर्धन को स्वार्थी कहा था और दूसरी बार फिर निस्वार्थ कहा—ऐसा क्यों? इन प्रश्नों का जवाब जानते हुए भी आप न देंगे, तो आप का मस्तक फटकर उसके टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे ।"

विक्रमार्क ने इसके उत्तर में कहा, "यह तो साबित हो चुका है, कि विश्वकर्म राज्य-शासन के कार्यों में दक्ष है । परन्तु साथ ही वह ईमानदार और स्वामीभक्त भी है । इसी कारण उसने झूठ बोलकर, कि राज्यशासन का कार्य अपनी शक्ति के बाहर की बात है, सिंहासन को अस्वीकार किया । एक संदर्भ में उसने राजा को स्वार्थी बताया था, इसका कारण यह था कि नन्दीवर्धन के सामने जो समस्याएँ उत्पन्न हुई थीं, उनका असली कारण विश्वकर्म का छद्मवेष धारण करना नहीं था, बल्कि 'उसकी अपनी ग्रन्थ-पठन की अभिरुचि' था । इसी कारण वे अज्ञातवास में रह गये ।—यह बात नन्दीवर्धन भली भाँति समझ लें, यही चेतावनी विश्वकर्म ने उसे 'स्वार्थी' कहकर दी है । अब फिर उसे 'निस्वार्थ' कहने का कारण यह है कि, कुछ महीनों तक राज्य से सम्बन्धित सभी रहस्यों से परिचित हुए उसको राज्य से बाहर न भेजकर, राजा नन्दीवर्धन ने उसे अपना 'अंतरंग सलाहकार' बनाकर अपनी बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन किया ।"

यह उत्तर देकर राजा के मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पुनः पेड़ की शाखा पर जा बैठा ।

(कल्पित)

स्वार्थ और परार्थ

माणिकपुर गाँव के दो बुज़ुर्ग मंदिर बनाने के लिए ग्रामवासियों से चन्दा वसूल करने लगे । भूषणसिंह उस गाँव का सब से धनी किसान था, पर वह था बड़ा कंजूस । जब उसे मालूम हुआ कि चन्दादाताओं की सूची में उसका नाम नहीं है, तो उसे अपना अपमान-सा लगा ।

एक दिन भूषणसिंह शहर से गाँव लौट रहा था, तब चन्दा वसूल करनेवाले दोनों बुज़ुर्गों से अचानक मुलाक़ात हुई । भूषण सिंह ने उनको अपने पास बुला लिया और कहा—"इधर आप दोनों ने जो कार्य अपने हाथ में लिया है, वह सचमुच बड़ा ही प्रशंसनीय है । कल सुबह आप दोनों हमारे यहाँ पधारिएगा?"

"ठीक है, ज़रूर आएँगे ।" बुज़ुर्गों ने जवाब दिया ।

दूसरे दिन सुबह जब दोनों बुज़ुर्ग भूषण सिंह के पास पहुँचे तो उनका बड़े प्रेम से स्वागत हुआ । पास में बंधी गाय को दिखाते हुए भूषण सिंह ने कहा—"देखो शिवराज, पशु-चिकित्सा तुम खूब जानते हो । इस गाय के कान से पीब निकलता है । क्या बात है भला?"

शिवराज ने गाय की जाँच की । उसके कान में किसी वनस्पति का रस निचोड़ते हुए कहा—"यह कोई बड़ी बीमारी नहीं है । सब ठीक हो जाएगा । आप चिंता न करें ।"

इसके बाद भूषण सिंह ने दूसरे बुज़ुर्ग लक्ष्मण सिंह से कहा—"लक्ष्मणजी, आप तो बड़े वास्तुशास्त्रज्ञ हैं । बताइए कि गाय-भैंसों के लिए झोंपड़ी कहाँ बनाना उचित होगा?"

लक्ष्मण सिंह ने एक जगह चुनी । रेखा खींच कर बताया कि कहाँ गोशाला बनाना उचित होगा ।

उस दिन शाम को चौपाल पर इकट्ठे लोगों को शिवराज तथा लक्ष्मण सिंह ने बड़े गर्व से बताया—"सुनिए, भूषण सिंह जैसे अव्वल दर्जे के कंजूस से हमने मंदिर के लिए पचास रुपया चंदा वसूल किया है! समझें?"

सब लोगों को बड़ा ही आश्चर्य हुआ । तब एक वृद्ध ने शिवराज से पूछा—"बताइए, आपने जो इलाज किया उसका शुल्क साधारण कितना होगा?"

शिवराज ने कहा—"कम से कम बीस रुपये ।"

"लक्ष्मणजी, आपकी सलाह के लिए आप क्या लेते?" वृद्ध ने पूछा ।

लक्ष्मण सिंह ने बताया—"कम से कम एक सौ सोलह रुपये!"

वृद्ध ने मुस्कुराते हुए कहा—"ओह, तब तो केवल पचास रुपये चन्दा देकर भूषण सिंह ने अच्छा स्वार्थ और परार्थ संपन्न कर लिया!"

चन्दामामा पुरवणी

ज्ञान का ख़ज़ाना

वह कौन?

किसी समय एक ब्राह्मण युवक ने अपने कुछ साथियों के साथ समुद्री यात्रा करने का साहस किया । कई हफ़्ते तक उन्होंने अपनी नावों पर यह समुद्री यात्रा की और अन्त में उन्हों ने एक द्वीप का पता लगाया । लेकिन उनकी नावें जब तट के समीप पहुँचीं तब उन्होंने वहाँ एक सशस्त्र सेना खड़ी पायी । ब्राह्मण युवक ने देखा कि एक युवती उस सेना का संचालन कर रही है । ब्राह्मण युवक ने अपना धनुष्य उठाया । लेकिन वह एक भी बाण चला नहीं पाया । किनारे पर खड़ी युवती ने भी कोई प्रतिक्रिया नहीं की । ब्राह्मण युवक ने किनारे पर कदम रखा और उस युवती को एक सुन्दर वस्त्र भेंट किया । इस के बाद उन दोनों ने विवाह किया । ब्राह्मण युवक ने वहाँ एक हिन्दू राज्य की स्थापना की । यह घटना ई.स. १९७ की है ।

कौन था वह युवक? और कौन था वह द्वीप?

क्या आप जानते हैं?

१. पाकिस्तान को यह नाम किसने दिया?

२. यह नाम कब दिया गया?

३. क्या उस पूरे नाम का कोई अर्थ है?

४. बुद्ध का जन्म लुम्बिनी में हुआ था । आज उस स्थान का नाम क्या है?

५. उस स्थान को कैसे पहचाना गया?

गांधार और तक्षशिला

आज हमारे देश के नक्शे पर गांधार नाम का कोई राज्य नहीं है । फिर भी हम में से शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो गांधार राज्य के बारे में जानकारी न रखता हो । इतिहास और साहित्य का अध्ययन करनेवाले विद्यार्थी गांधार के बारे में थोड़ा-बहुत अनायास जान लेते हैं ।

हमारे प्राचीन साहित्य में जहाँ-तहाँ गांधार राज्य के बारे में उल्लेख पाए जाते हैं । अंग, वंग, कलिंग आदि छप्पन राज्यों में गांधार एक प्रमुख राज्य है । धृतराष्ट्र की पत्नी गांधारी गांधार देश की युवरानी थी । इसी लिए उसका नाम गांधारी पड़ा । गांधारी का भाई शकुनि गांधार देश का राजा था । कौरव-पांडवों के संग्राम में शकुनि का जो महत्त्वपूर्ण योगदान रहा, वह सर्वविदित है ।

गांधार राज्य सिंधु नदी के दोनों तरफ फैला हुआ था । आज वह प्रदेश पाकिस्तान

के रावलपिंडी तथा पेशावर ज़िलों का क्षेत्र है ।

प्राचीन काल के अनन्तर भी गांधार राज्य का वैभव बना रहा । खास कर उस राज्य के दो नगर-तक्षशिला और पुष्कलावती उच्च शिक्षा, संस्कृति, वाणिज्य तथा व्यापार के महान् केन्द्र रहे हैं । तक्षशिला का विश्व-विद्यालय बहुत प्रसिद्ध रहा ।

सुप्रसिद्ध तक्षशिला विश्व-विद्यालय में संसार के अनेक मेधावियों ने विद्याभ्यास किया था । ई.पू. पाँचवीं शताब्दी में मगध पर बिंबिसार ने राज्य किया था । उनके दरबार के सुप्रसिद्ध वैद्यशास्त्री जीवक ने तक्षशिला विश्व-विद्यालय में सात साल तक अध्ययन किया था । जीवक को मशहूर धन्वंतरी के रूप में सभी जानते हैं ।

रावलपिंडी से ३० कि.मी. दूरी पर सराय-कोला रेल्वे स्टेशन के पास तक्षशिला विश्व-विद्यालय के खंड़हर मिले हैं । इन खंड़हरों को देखने पर तक्षशिला की विशालता का पूरा परिचय मिलता है ।

कुछ समय के लिए गांधार राज्य फारस साम्राज्य के अंतर्गत था । इस राज्य के कुछ हिस्सों को ग्रीकों ने भी अपने अधिकार में कर लिया था । इसी कारण इस प्रदेश की कला तथा शिल्पकलाओं पर विदेशी प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है । आज भी गांधार कलाओं ने अपना स्थान अक्षुण्ण बना रखा है ।

पहाड़ों के बीच जहाँ तहाँ घाटियों में पठान वास करते हैं जो अपने धैर्य व साहस के लिए मशहूर हैं । पेशावर पठानों की इस मातृभूमि के लिए सिंह द्वार बना हुआ है ।

साहित्यावलोकन

१. श्रीकृष्ण का परिचय देनेवाले दो प्रमुख ग्रन्थ कौनसे हैं?

२. तीन प्रमुख भिन्न विषयों का परिचय देनेवाले तीन शतकों की रचना किस कवि ने की?

३. उन तीन शतकों के नाम क्या हैं?

४. उस कवि का जन्म कहाँ हुआ?

५. मिश्र देश का अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ कौनसा है?

६. यह ग्रन्थ कितना पुराना है?

उत्तरावलि

वह कौन?

काम्भोज (कम्बोडिया) देश की स्थापना कौंडिण्य ने की थी।

सामान्य ज्ञान

१. चौधरी रहमत अली।

२. १९३३ में।

३. पवित्र भूमि।

४. नेपाल की तराई में स्थित रुम्मिण्डी।

५. सम्राट अशोक द्वारा निर्मित शिलास्तम्भ से जो आज भी वहीं है।

साहित्य

१. भागवत, महाभारत।

२. भर्तृहरी।

३. शृंगारशतक, वैराग्यशतक और नीतिशतक।

४. भर्तृहरी को उज्जयिनी का युवराज कहा जाता है।

५. मृतकों का ग्रन्थ।

६. इसका थोड़ा अंश ई.स.पू. ३,२०० में भी विद्यमान था।

नक़ली सोना

शिवपुरी में कनकदास नाम का एक साधारण आदमी रहा करता था। उसके दो पुत्र थे—मोहनदास और कृष्णदास और एक पुत्री थी राधा। विवाह के योग्य होने पर कनकदास ने तीनों की शादियाँ कर दीं। उसके मरने तक सभी एक ही घर में रहा करते थे। सब मिल ।जुल कर रहते। कनकदास की बीबी सुगुणा सब से प्रेम करती। बहुओं को अपनी पुत्रियाँ समझती। राधा का घर भी उसी गाँव में था। उसके पति की एक छोटी दूकान थी। सुगुणा समय समय पर राधा के यहाँ पहुँचती।

कनकदास की मृत्यु के बाद मोहनदास और कृष्णदास ने पिता की बची संपत्ति आधी बाँट ली और दोनों अलग अलग रहने लगे। कनकदास की पत्नी अपने दोनों बेटों के पास बारी-बारी से रहने लगी।

शुरू में दोनों बहुएँ सास के साथ बहुत आदरपूर्वक व्यवहार करती रहीं। सुगुणा को कोई काम करने न देती। वह कभी बीमार होती तो दिल से उसकी सेवा करती। लेकिन धीरे धीरे प्रेम की जगह कटुता ने ले ली। उसका प्रमुख कारण यह था कि अब सास राधा के पास न गहने थे, न रुपया। अगर कभी वह बीमार पड़ती तो अधिक खर्च न करना पड़े, इस लिए उसका इलाज भी नहीं किया जाने लगा। सुगुणा के पुत्र अपनी पत्नियों पर नियंत्रण नहीं कर सकते थे। थोड़े दिनों के बाद सब का व्यवहार कुछ ऐसा हुआ कि मानो माता का पालन-पोषण उनके लिए भारी पड़ रहा हो। सुगुणा को लड़कों के पास अपने दिन गुज़ारना मुश्किल होने लगा। अकेले में वह रो लेती और बड़े दुख से दिन काट लेती। रात में आराम की नींद उसे न मिलती।

सुगुणा को अब अपने पुत्र व बहुओं के साथ रहना मुश्किल हो गया। इस लिए वह अपनी लड़की राधा के घर जाकर रहने लगी। राधा

अनसूया सिंह

ने कुछ दिन अपनी माता के प्रति प्रेम का बर्ताव किया। पर बाद में मौक़ा मिलने पर ताने शुरू हुए—ज़मीन-जायदाद बाँट लेने के लिए पुत्र, और पालन-पोषण के लिए पुत्री! सुगुण को यह ताने सुन कर बड़ा दुख होता। पर बेचारी क्या करती?

सुगुणा ने महसूस किया कि लड़की की बातों में सचाई ही तो है। इस लिए वह गाँव के मुखिये के पास गई और अपने पुत्रों के संबंध में शिकायत की। गाँव के कभी लोग मुखिये के बारे में आदर-भाव रखते थे। सब को विश्वास था कि मुखिये के फ़ैसले से सब को उचित न्याय मिलता है।

सुगुणा के प्रति उसके लड़के और लड़की कटु व्यवहार क्यों करते हैं इसका कारण मुखिये के ध्यान में आ गया। मुखिये ने सुगुणा को समझाया—"बहन, तुम बिलकुल चिंता मत करो। तुम्हारे पति ने मरने के कुछ दिन पहले एक सोने के आभूषणों की पेटी मेरे हाथ सौंप दी है। उन्होंने यह नहीं बताया कि पेटी वे मेरे पास क्यों दे रहे हैं। मैं तुम्हारे लड़कों व लड़की से बात करूँगा। अभी तुम मेरे घर पर ही रहो।"

मुखिये ने उन सब को बुला भेजा और समझाया—"तुम लोग अपनी माँ का ठीक पालन-पोषण नहीं कर रहे हो। माता का पाल-पोस करना पुत्रों का कर्तव्य ही है न? अगर तुम लोग माँ की ठीक ढंग से देख-भाल नहीं कर सकते हो, तो भी उसके सुखपूर्वक जीने का आधार मेरे पास है, इस बात को मत भूलना।"

मुखिया की बातें सुगुणा के पुत्रों की समझ में न आईं। उन्होंने पूछा—"महाशय, आप पहेली क्यों बुझा रहे हैं? ज़रा साफ़ साफ़
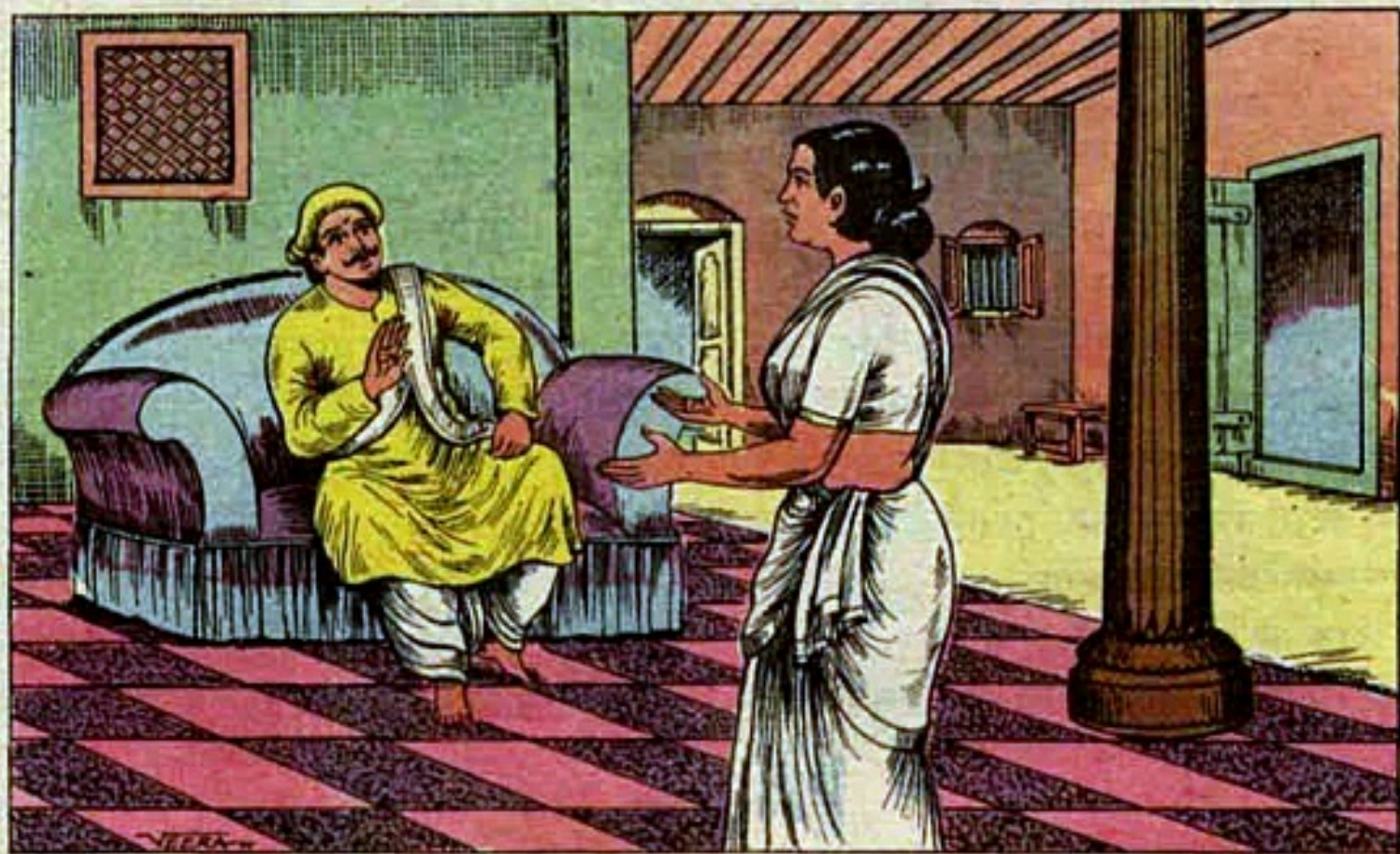
बताइए न?"

मुखिये ने अपने मन की बात सब के सामने खोल दी–"सुनो, कनकदास ने अपनी मौत के समय एक सोने के गहनों की पेटी मेरे हाथ सौंप दी थी और कहा था कि उनके तथा सुगुणा के मरने बाद वे सब आभूषण तुम दोनों भाई और बहन राधा को मैं समान रूप से बाँट दूँ। इसके अलावा उन्होंने यह भी बता दिया था कि यदि किसी ने माँ की देखभाल करने में कसर रखी तो उसका हिस्सा उसे न दिया जाए। आज की हालत देखते हुए मुझे लगता है कि इन आभूषणों को बेचकर वह रकम मैं सुगुणा माँ के पालन-पोषण में खर्च कर दूँ! बोलो–तुम लोगों की क्या राय है?"

सुगुणा के पुत्रों ने बड़े विस्मय के साथ मुखिये की ओर देखा। मुखिया घर के भीतर गया और एक पेटी ले आया। ढक्कन खोल कर अन्दर चमकते हुए गहनों को उसने दिखा दिया। सुगुणा के लडकों और लड़की ने अंदाज़ लगाया कि उन गहनों का मूल्य कम-से-कम पचास हज़ार रुपया अवश्य होगा।

इस पर सुगुणा के पुत्रों ने कहा–"महाशय, जो कुछ हो गया, सो हो गया। हमें इस बात का खेद है कि हम अपनी माँ के प्रति समुचित आदर न दिखा पाये। आज तक हम से जो भूल हो गई, उसके लिए हमें क्षमा कर दीजिएगा।" अब तीनों में माँ को अपने घर ले जाने के लिए होड़-सी लगी।

माँ ने स्वीकार किया कि वह एक एक के पास बारी-बारी से एक महीना रहेगी। तब से पुत्री राधा और दोनों बहुएँ अत्यंत प्रेम के साथ माँ की देखभाल करने लगीं। उसके लिए आवश्यक सभी सुविधाएँ उसे प्राप्त होने
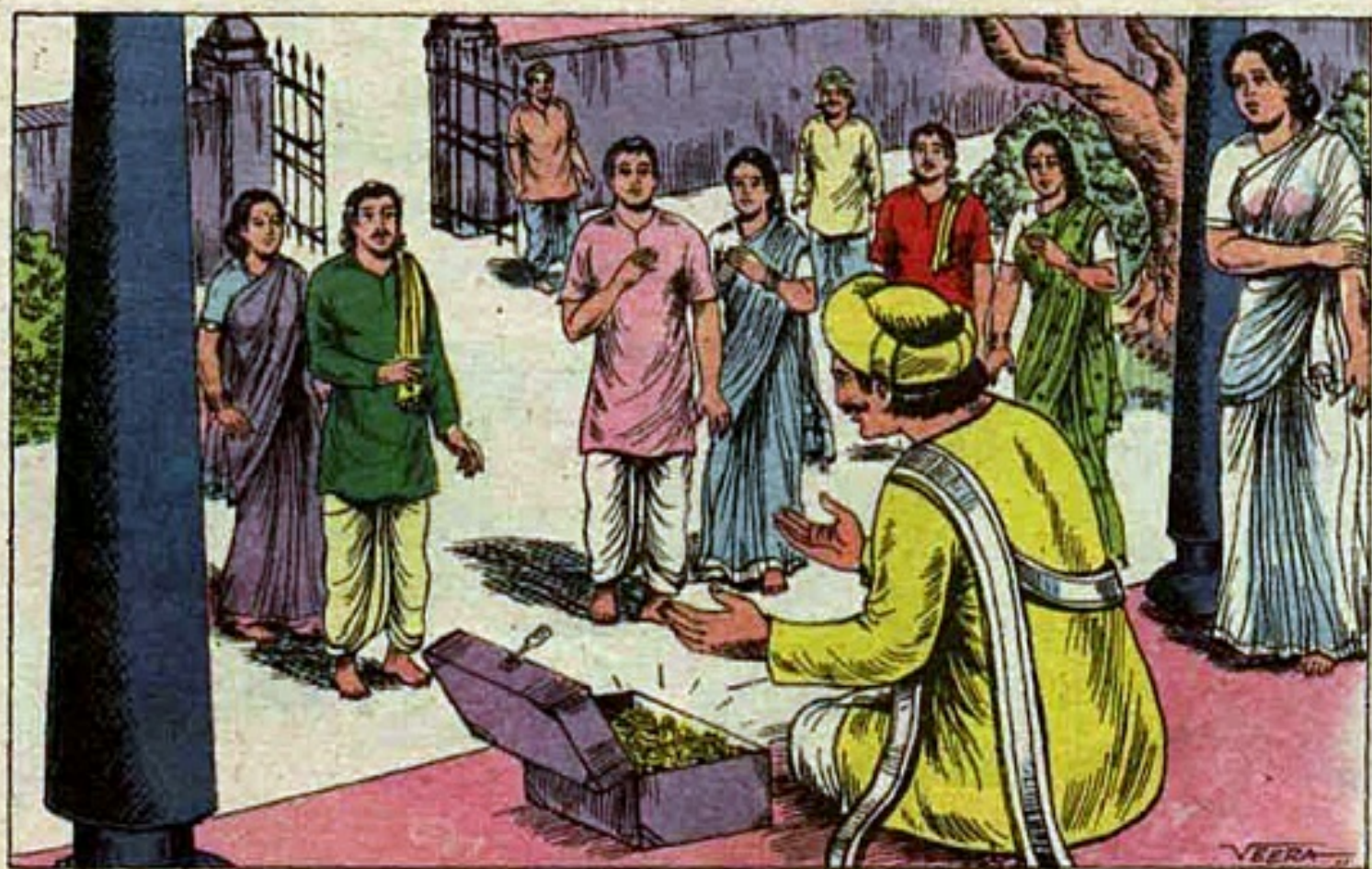
लगीं ।

इसके बाद कुछ साल सुगुणा ने बड़े सुखपूर्वक बिताये और आखिर एक दिन वह भगवान की प्यारी हो गई ।

पुत्रों व दामाद ने बड़े ठाठ से सब कर्म-कांड समाप्त किया ।

एक दिन वे सब गाँव के मुखिये के यहाँ पहुँचे और उनसे निवेदन किया कि अब गहनों का वितरण किया जाए । मुखिये ने उनकी बात मान ली । गहनों का सही मूल्य आँकने और उन्हें बराबर बाँटने के लिए उन्होंने शरभ नाम के सुनार को बुलवाया ।

उन गहनों को देख कर शरभ को बड़ा ही आश्चर्य हुआ । क्यों कि वे सब गहने सोने के न थे, बल्कि नकली सोने के थे । शरभ के मुँह से ये बातें सुनकर सुगुणा के लड़के, लड़की और बहुओं को बड़ा ही विस्मय हुआ ।

सब ने एक स्वर में कहा—"यह कैसा धोखा है? यह दगा हो रहा है हमारे साथ! नकली गहने दिखा कर अन्याय हो रहा है!"

मुस्कुराते हुए मुखिया बोला—"तुम लोगों ने कौन-सा बड़ा उपकार किया किसी के साथ? गहनों के प्रलोभन से माँ के प्रति नकली प्रेम दर्शाया तुम लोगों ने, नकली प्रेम का प्रतिफल है नकली गहने! अगर माँ के प्रति वास्तव में तुम्हारे मन में प्रेम होता, तो माँ को मेरे पास आने की नौबत ही न आती । पिछले कुछ वर्षों में तुमने केवल प्रेम का नाटक किया । तुम लोग कैसा सोचते हो?"

किसी ने कुछ उत्तर नहीं दिया । पर उन लोगों ने माँ के प्रति जो निर्दयतापूर्ण व्यवहार किया था, उसे याद कर मारे अपमान के अपने सर झुकाए ।

मुखिये ने कहा—"तुम लोगों ने सुना ही होगा, जैसा बीज, वैसा पौधा! माँ के प्रति तुम्हारा प्रेम बाहर से चमक-दमक वाला, पर भीतर से बनावटी रहा होगा । अब तुम लोग जा सकते हो ।"

वास्तव में बात यह थी कि कनकदास ने मुखिये के पास कोई गहनों की पेटी नहीं रखी थी । कनकदास के पुत्रों व बहुओं के दिलों में परिवर्तन लाने के लिए मुखिये ने यह सारा स्वांग मात्र रचा था ।

अटारी पर अद्‌भुत

दो भाई थे—अरविन्द और मुकुन्द । दोनों ने श्रीकान्तपुर में एक ही स्थान पर अपने मकान बनवाये । गृह-प्रवेश के समय पुरोहित वेंकट शास्त्री ने उन्हें सलाह दी-"ये दोनों मकान वास्तुशास्त्र के अनुसार ही बनाये गये हैं निश्चय, पर उत्तम होगा कि बायीं तरफ का मकान मुकुन्द ले, और दहिनी ओर का अरविन्द!"

इस पर दोनों भाई घबरा गये और बड़ी आतुरता से पुरोहितजी से पूछा—"मान लीजिए, आपके सुझाव के अनुसार हम मकान नहीं बदलेंगे तो क्या होगा?"

वेंकट शास्त्री ने बताया—"तुम दोनों की जन्मकुंडली के अनुसार हिसाब लगाकर मैंने बता दिया है । अगर इस प्रकार तुम अपने मकान नहीं बदलोगे तो एक प्रकार की दुष्ट शक्तियाँ तुम्हें सताएँगी । तुम्हें क्या तकलीफ होगी यह तो मैं नहीं कह सकता । लेकिन उनसे तुम्हारी जान के लिए कोई ख़तरा नहीं है ।"

"ओह, बस इतनी-सी बात है! हमने सोचा कोई भयंकर अनहोनी की तो संभावना नहीं? हम दुष्ट शक्तियों पर विश्वास नहीं रखते । हमें अपनी अपनी शक्तियों पर दृढ़ विश्वास है । कमज़ोर दिलवाले दुष्ट शक्तियों पर विश्वास रखते हैं, और इस से उनको नुक़सान ही पहुँचता है । अगर हम में पूरा आत्म-विश्वास हो तो ये दुष्ट शक्तियाँ हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं । मुकुन्द, मैं ठीक कह रहा हूँ न?" किंचित् कंपित स्वर में अरविन्द ने छोटे भाई से पूछा ।

इधर उधर ताकते हुए गर्व के साथ मुकुंद ने कहा—"नहीं तो क्या?"

उन भाइयों की बातों पर नाराज़ हो वेंकट शास्त्री ने कहा—"ऐसा हो, तो तुम दोनों ने मेरे हाथों गृह-प्रवेश का शुभ कार्य भला क्यों

सीमंतिनी गायकवाड

करवाया? मैं जो कुछ जानता हूँ, उसे बताना मेरा कर्तव्य है । अब जैसी तुम्हारी क़िस्मत होगी, भोग लो ।"कहते हुए वेंकट शास्त्री वहाँ से चल दिये ।

अब अरविन्द और मुकुन्द ने अपने अपने मकान में सारे सामान सजाए । चूँकि सामान बहुत ज़्यादा थे, इस लिए कुछ सामान ऊपर अटारी पर रख दिये गये । अरविन्द ने अपने मकान की अटारी पर दो तेल के डब्बे, दस धान के बोरे और कुछ छोटे-मोटे फुटकल सामान रखवा दिये । मुकुन्द ने अपनी अटारी पर उड़द के पाँच बोरे और अचार के दो मर्तबान चढ़वा दिये ।

उस रात को दोनों भाइयों के परिवार अपने नये मकानों में सो गये । आधी रात के समय अरविन्द कुछ सोचता रहा । फिर धान का एक बोरा उतारने का विचार करके अटारी पर चढ़ा जो देखता क्या है, वहाँ पर धान के बोरों की जगह उड़द के बोरे और अचार के मर्तबान रखे हुए हैं । अरविंद ने सोचा कि ये चीज़ें तो मुकुन्द की हैं! इस लिए वह झट अटारी पर से नीचे उतर आया और अपने छोटे भाई के घर आया ।

उसी समय मुकुन्द भी कुछ घबराया-सा अरविन्द के घर की ओर आ रहा था । अरविन्द ने मुकुन्द से पूछा—"क्या तुम्हारी अटारी पर मेरे सामान हैं?"

"जी हाँ, मेरे अटारी पर आपके सारे सामान आ गये हैं । यह सब तो विचित्र ही मालूम होता है । तो फिर मेरे सारे सामान कहीं आप की अटारी पर नहीं आ गये हैं?" मुकुंद ने पूछा ।

अरविंद ने जवाब दिया—"हाँ, ठीक ऐसा ही हो गया है!"

यह तो बड़ा आश्चर्य है । यों सोचते दोनों भाइयों ने पुन: अपने सामान अपनी अपनी अटारी पर चढ़ा लिये ।

सबेरे नींद से अरविन्द जागा, तो यह सोचते हुए कि 'यह भी कैसा दु:स्वप्न है!' अपने छोटे भाई से परामर्श करने के लिए मुकुन्द के घर पहुँचा ।

मुकुन्द अपने मकान के बरामदे में बैठकर कुछ सोच रहा था । उसकी आँखों की ओर देखने पर ऐसा मालूम हो रहा था जैसे कि वह रात भर सोया ही नहीं है ।

अरविन्द ने अपने छोटे भाई से पूछा—"शायद तुम आज रात में सोये नहीं क्या?"

मुकुन्द ने बड़े भाई की आँखों की ओर कुछ बारीकी से देखा और पूछा—"लगता तो ऐसा है कि आप भी रात को सोये नहीं । आखिर बात क्या है?"

इस पर अरविन्द ने अपना अनुभव सुनाया । मुकुन्द ने आश्चर्य में आकर कहा—"मुझे भी कुछ ऐसा ही अनुभव हुआ । अटारी पर चढ़ कर उड़द के बोरे उतारना चाहा, तो देखता क्या हूँ, वहाँ पर धान के बोरे हैं!"

अरविन्द ने अपने छोटे भाई से पूछा—"यह सब कुछ विचित्र-सा ही मालूम हो रहा है । क्या दुष्ट शक्तियों पर तुम्हारा विश्वास है?"

"ऐसी शक्तियों पर हमारा कोई विश्वास नहीं है । और यह बात हमने वेंकट शास्त्री को साफ बता दी थी न?" मुकुन्द ने जवाब दिया ।

"हाँ, हाँ, कह दिया है । पर मैं यह बिलकुल भूल गया हूँ ।" कहते हुए अरविन्द अपने घर चला गया ।

उस दिन रात को दोनों भाइयों ने इन दुःस्वप्नों का पता लगाने का निश्चय किया और अपनी अपनी अटारी पर लेट गये ।

दूसरे दिन सुबह अरविन्द नींद से जागा, तो सारे सामान अपने स्थान पर सुरक्षित थे । इस पर उसने मारे खुशी के अपनी पत्नी को पुकारा ।

यह पुकार सुन कर छोटे भाई मुकुंद की पत्नी वहाँ पर आ पहुँची और उसने कहा—"समझ में नहीं आता, आज जीजाजी

हमारी अटारी पर क्यों पहुँच गये हैं?"

अरविन्द को बड़ा आश्चर्य हुआ और वह कुछ जवाब देने ही वाला था, कि उसकी नींद खुली। उसी समय उसकी पत्नी अटारी के पास पहुँची और खीझ कर बोली—"अजि, कोई काम हो तो क्या कहीं अटारी पर से ही पुकारा जाता है?"

"यह तो एक और दु:स्वप्न है!" यों विचार करते हुए अरविन्द तुरन्त अपने छोटे भाई के पास पहुँचा और सारी बातें सुनाकर पूछा—"तुमने तो कहीं रात में कोई दु:स्वप्न नहीं न देखे?"

"दु:स्वप्न! एक नहीं, दो नहीं, मैं कितनों को याद रख सकता हूँ? उन सपनों को देखते-देखते सारी रात बीत जाती जो कितना अच्छा होता। पर बीच-बीच में नींद टूटती रही। अगर ऐसा ही होता रहा तो मेरी तबियत बिगड़ने में अब ज़्यादा वक्त नहीं लगेगा।" रोनी सूरत बनाते हुए मुकुन्द ने कहा।

"दुष्ट शक्तियों पर तुम्हारा विश्वास नहीं है न?" अरविन्द ने छोटे भाई से पूछा।

मुकुन्द ने उत्तर दिया—"मैं क्या कहूँ? पुरोहित वेंकट शास्त्री ने जब हमें अपने मकान बदलने की सलाह दी थी, तब आपने ऐसे अंध-विश्वासों का विरोध किया था। मैंने बस आप की बात का समर्थन किया था।

सोचता हुआ अरविन्द थोड़ी देर तक मौन रहा, फिर बोला—"दुष्ट शक्तियाँ हैं या नहीं, इस बात को हम छोड़ देंगे। वेंकट शास्त्री की सलाह ने हम दोनों के दिलों में कोई शंका अवश्य पैदा कर दी है। हम इस झंझट में भला क्यों फँसे रहे? इन दु:स्वप्नों को ढोते हुए कितने दिन निद्रा से वंचित रह सकते हैं? शास्त्री की सलाह के अनुसार अपने अपने मकान क्यों न बदल दें?"

"मैं भी कुछ ऐसा ही सोच रहा हूँ। ऐसा ही करेंगे।" मुकुन्द ने प्रसन्नता पूर्वक कहा।

उसी दिन भाइयों ने अपने अपने सामानों के साथ अपने मकान बदल दिये। फिर केवल उस रात को ही क्या, किसी भी रात को किसी को दु:स्वप्नों ने नहीं सताया।

एक ओर द्रौपदी, श्रीकृष्ण की पत्नियाँ तथा अन्य नारियाँ वार्तालाप में निमग्न थीं तो दूसरी ओर सभी पुरुष एकत्रित हो बातचीत में व्यस्त थे । इस वार्तालाप में सब को बड़ा आनन्द आ रहा था । ऐसा अवसर अब तक कभी नहीं आया था । सभी अपनी तरफ के समाचार दूसरों को सुनाने को उत्सुक थे । उसी समय अनेक मुनि बलराम और श्रीकृष्ण को देखने के लिए आ पहुँचे । पांडवों तथा अन्य राजाओं ने उठ कर मुनियों को आदरपूर्वक प्रणाम किया । सब के साथ श्रीकृष्ण और बलराम ने भी श्रद्धा-भक्तिपूर्वक मुनियों की पूजा की । सब के मन में जिज्ञासा थी, कि यकायक सारा मुनि-वृंद यहाँ कैसे उपस्थित हुआ! ऐसा कौन महत्त्वपूर्ण कार्य संपन्न करने के लिए ये सारे मुनि-गण यहाँ पधारे हैं?

मुनियों ने श्रीकृष्ण की स्तुति करते हुए कहा—"आप तो मानव रूपधारी आदि देव हैं । हम लोग भले ही महान् तत्त्ववेत्ता हों, आपकी माया के अधीन हैं ।"

मुनियों की सलाह पर वसुदेव ने यज्ञ करके देवताओं का ऋण चुकाने का संकल्प किया । यादवों ने यज्ञ के लिए आवश्यक सारी सामग्री जुटाई । वसुदेव तथा उनकी अठारह पत्नियों ने स्नान कर नये वस्त्र तथा आभूषण धारण किये और यज्ञ की दीक्षा ग्रहण की । इसके बाद मुनियों की सहायता से प्रकृति तथा विकृति संबंधी यज्ञ करके यज्ञ-पुरुष की आराधना की और ऋत्विकों को गायें, ज़मीन तथा कन्याएँ दक्षिणा के रूप में प्रदान कर उनको संतुष्ट किया । यज्ञ की समाप्ति पर

वसुदेव ने अवभृत स्नान किया और अपने बंधु-जनों को प्रीतिभोज दिया। यज्ञ सफलतापूर्वक संपन्न हुआ इसका सबको बड़ा ही संतोष रहा। जिन जिन महानुभावों ने इस कार्य में सहायता की उनको हार्दिक धन्यवाद दिए गये।

एक दिन देवकी के मन में एक विचार आया—उसके पुत्र बलराम और श्रीकृष्ण कोई साधारण व्यक्ति नहीं हैं, बड़े शक्तिसंपन्न हैं। उन्होंने अपने गुरु के मृत पुत्र को जीवित करके उनके हाथ सौंपा था। कंस ने उसके सभी पुत्रों को मार डाला है। क्या श्रीकृष्ण उन सभी मृत पुत्रों को पुनः ले आकर मुझे दिखा नहीं सकते?

बलराम तथा श्रीकृष्ण से देवकी ने यही बात पूछी। देवकी की इच्छा को स्वीकार कर वे दोनों योगमाया धारण कर सुतल में पहुँचे। बलि चक्रवर्ती ने वहाँ उनका अपूर्व स्वागत किया और उनके आगमन का कारण पूछा। "आज आप कैसे अनपेक्षित रूप से इस लोक में पधारे? ज़रूर, ऐसा ही कोई महत्त्वपूर्ण कार्य संपन्न करने की योजना होगी। बताइए, हम आपकी क्या सेवा कर सकते हैं?"

श्रीकृष्ण ने बलि चक्रवर्ती से निवेदन किया—"महाराज, प्राचीन काल में स्वयंभु मन्वन्तर के समय में मीरीचि के छह पुत्र ब्रह्मा के द्वारा सरस्वती से प्रेम करते देख हँस पड़े थे। इस पर ब्रह्मा ने उनको राक्षसों के रूप में जन्म धारण करने का अभिशाप दिया था। इस पर वे स्मर, उद्गीथ, परिष्वंग, पतंग, क्षुद्रभ और घृणि नाम से सर्वप्रथम हिरण्य कश्यप के पुत्रों के रूप में पैदा हुए, उसके बाद हमारी माता देवी देवकी के गर्भ से उत्पन्न हुए और इसके बाद कंस के द्वारा मारे जाकर अब आपके राज्य में हैं। अगर आप उनको मेरे साथ भेज दें, तो मैं उनको माता देवकी को दिखाकर उनकी चिंता को दूर करूँगा। माता देवकी बहुत दिनों से अपने पुत्रों के दर्शन करना चाहती है। आज तक उन्होंने अपनी यह इच्छा कभी प्रकट नहीं की। अब जब उन्होंने कह ही दिया तो उनकी इच्छापूर्ति करना मेरा प्रथम कर्तव्य है।

पहले मैं उन सब को माता देवकी के पास ले जाऊँगा। उनको पूरा संतोष देने के अनन्तर उनको उत्तम लोकों में भेज दूँगा।"

ने उसे विदा किया । गणदेव जब लौट रहा था तो उसकी नज़र लंगड़ाती हुई पिंगलिनी पर पड़ी ।

बहरहाल, अमावस के दिन गणदेव अपने शिकारी कुत्तों के साथ जंगल की ओर चल पड़ा । जंगल में पहुंचकर उसने सफेद हिरणी की खोज की । आखिर, जब उसे ऐसी हिरणी दिखाई दी तो उसने तुरंत अपने कुत्तों को उसके पीछे लगा दिया । हिरणी हवा से बातें करती हुई दौड़ रही थी ।

कुछ देर बाद गणदेव ने देखा कि केवल एक ही कुत्ता हिरणी के पीछे दौड़ रहा है । उसने यह भी देखा कि वह कुत्ता उसका नहीं है ।

कुत्ते को लंगड़ाते हुए देखकर गणदेव के मन में कुछ विचार आया । उस कुत्ते ने आखिर अपने मुंह से हिरणी की पिछली टांग पकड़ ली और उसे रोक लिया । गणदेव फौरन वहां पहुंचा और उसने अपने हाथ का फंदा उस हिरणी के गले में डाल दिया । उसके बाद हिरणी ने भागने की कोशिश नहीं की, बल्कि उसके पीछे-पीछे चलने लगी । जिस कुत्ते ने हिरणी को पकड़ा था, वह अब कहीं दिखाई नहीं दे रहा था ।

गणदेव उस हिरणी को अपने यहां ले गया और उसे उसने एक कमरे में बंद करके वहां ताला लगा दिया । फिर वह अपने कक्ष में जाकर सो गया ।

सुबह जब उसकी आंख खुली तो उसने भयंकर भूकंप महसूस किया । उसे लगा जैसे उसके घर पर गाज गिरी है ।

बहरहाल, हुआ कुछ नहीं । हां, इतना ज़रूर हुआ कि सीमंतिनी की सभी सिद्धियां उसे छोड़कर चली गयीं । अब गणदेव ने उस कमरे का ताला खोला जिसमें उसने हिरणी को बंद किया था । लेकिन अब वहां हिरणी नहीं थी, उसकी जगह सीमंतिनी बैठी थी । वह अब गणदेव की पत्नी बनने को तैयार थी ।

आखिर उन दोनों का विवाह हो गया और वे सुख-शांति से रहने लगे ।
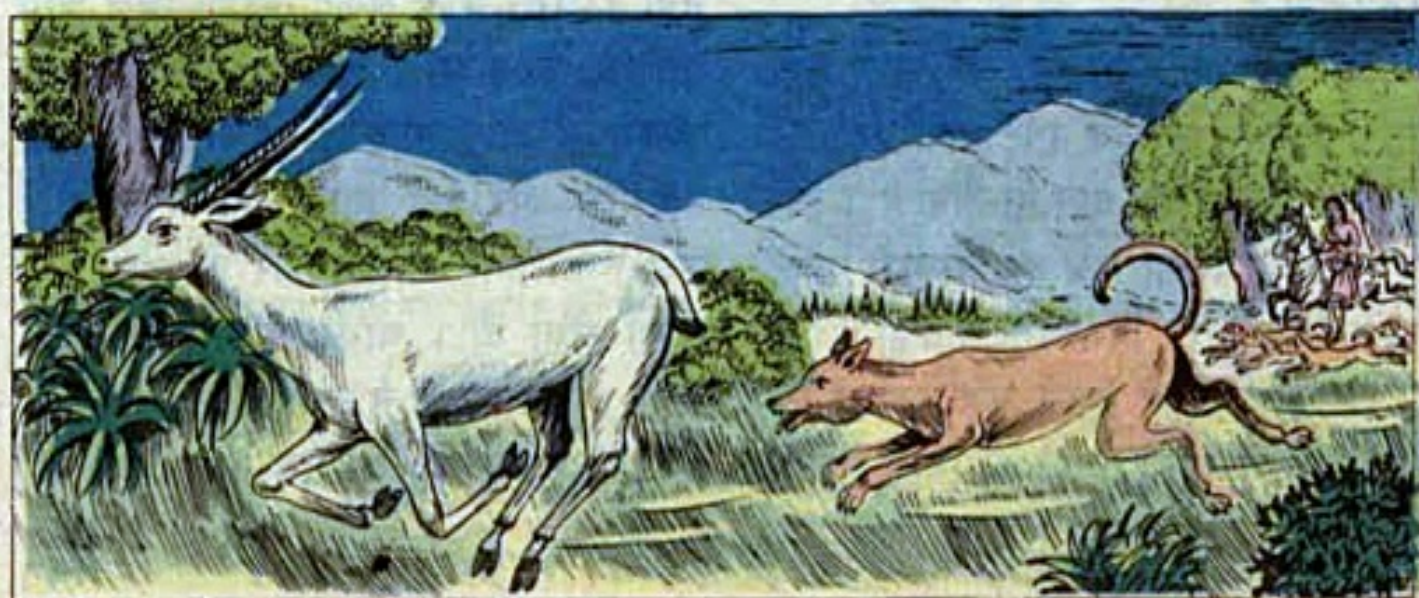
लोग तो सर्वज्ञ हैं । कृपया बताइए इसकी कोख से कौन शिशु जन्म लेगा?"

इस पर मुनि-गण अत्यंत क्रोधित हुए और उन्होंने शाप दिया—"अरे मूर्खों, इसके गर्भ से कुलनाशक मूसल पैदा होगा ।" मुनियों का शाप व्यर्थ थोड़े ही हो सकता है? खेल खेल में कुमारों ने यों ही कुछ किया । अब उन्हें शाप के फल को तैयार होना था!

यादव-कुमार अत्यन्त भयभीत हो भाग गये । सांबु के वस्त्र उतार कर देखा तो उन्हें उसके पेट से सचमुच एक मूसल बाहर निकलते दिखाई दिया । उन लोगों ने उसे बाहर निकाला और पछताने लगे—"उफ्! हमने कैसा जघन्य पाप किया? सब कुछ मालूम होने पर यादव-प्रमुख जाने क्या कहेंगे? अगर श्रीकृष्ण क्रोधित हुए तो जाने क्या करेंगे? उनका प्रेम तो बहुत देखा है, आज कोप को भी देखना पड़ेगा!" डरते हुए वे सब राजा उग्रसेन के पास पहुँचे और उनको सारा वृतान्त कह सुनाया ।

मूसल तथा मुनियों के शाप का समाचार शीघ्र ही सभी यादवों तक पहुँच गया । सब को बड़ा आश्चर्य हुआ, सभी भयभीत भी हो गये । उग्रसेन ने यादवों को सलाह दी कि वे मूसल को घिसाकर उसके चूर्ण को समुद्री जल में मिला दें । यादवों ने वैसा ही किया । वह चूर्ण समुद्र की तरंगों के धक्कों से किनारे की तरफ बह आया और वहाँ मोथे के रूप में उग आया । मूसल को घिसाने पर अंत में लोहे का जो एक टुकड़ा बचा रहा, उसको एक मछली ने निगल डाला । अन्य मछलियों के साथ यह मछली जाले में फँस कर एक मछुए के हाथ आ गई ।

मछुए ने मछली के पेट से लोहे का टुकड़ा निकाला और बाण की कील के रूप में इस्तेमाल करने के लिए एक शिकारी के हाथ सौंप दिया ।

इस प्रकार यादव वंश के सर्वनाश की सारी तैयारियाँ पूरी हो गईं ।

इसके थोड़े समय बाद द्वारका में भयंकर उत्पात हुए । लोगों ने वे चमत्कार देखे जिनकी उन्होंने कभी कल्पना तक न की थी । मारे डर के सब काँपने लगे । सब की आँखें श्रीकृष्ण की ओर देखने लगी । अब वे ही सब के त्राता दिखाई दिये । इस पर श्रीकृष्ण ने

सारे यादवों को सुधर्म-भवन में आमंत्रित किया और उनको समझाया –

"बंधुगण, द्वारका में जो भयंकर उत्पात नज़र आ रहे हैं, ये सब हानि-सूचक हैं । आप सब लोगों को मालूम ही है कि मुनियों ने यादव-वंश को अभिशाप दिया है । इस लिए हम सब लोगों को अब एक पल भर के लिए भी इस द्वारका में रहना उचित नहीं है । स्त्रियों, बच्चों और वृद्धों को हम शंखद्वार भेज देंगे । बाकी हम सब सरस्वती नदी के तट पर स्थित प्रभास तीर्थ जाएँगे । वहाँ जाकर स्नान, उपवास तथा देवताओं की पूजा करेंगे । ब्राह्मणों को गायें, स्वर्ण, वस्त्र, हाथी, घोड़े व घर दान करेंगे । उनके हाथों शांति-कर्म करवाएँगे । इस प्रकार हमारे अरिष्ट टल जाएँगे और हमारा शुभ होगा ।"

श्रीकृष्ण के प्रस्ताव को सभी यादवों ने मान लिया । स्त्रियों, बच्चों और वृद्धों को शंखद्वार रवाना किया गया और बाकी यादवों ने नावों में बैठकर समुद्र पार किया और प्रभास तीर्थ पहुँचे । लेकिन वहाँ उनको देव-माया ने घेर लिया । सब ने मद्य प्राशन किया और नशे में एक दूसरे से लड़ने लगे । आखिर एक घमासान लड़ाई शुरू हुई । उस लड़ाई में अनेक हाथी और घोड़े मर गये । रथ टूट गये । प्रमुख यादव एक दूसरे से द्वंद्व युद्ध करने लगे । प्रद्युम्न ने सांब के साथ युद्ध किया । इसी प्रकार अक्रूर ने भोज के साथ, अनिरुद्ध ने सात्यकि से, सुभद्र ने संग्रामजित के साथ, सुमित्र ने सुरथ से युद्ध किये । अन्य लोग भी आपस में युद्ध करने लगे । आपस में बंधु व मित्र-भाव तक न रहा । पागलों की भाँति एक दूसरे का संहार करने लगे ।

फिर उनके सारे बाण खतम हो चुके । सारे

धनुष टूट गए। उनके हाथ में एक भी आयुध न बचा। समुद्र तट पर ऊँचे उगे मोथे थे। उनको उखाड़ कर एक दूसरे का वध करने लगे। श्रीकृष्ण ने उनको रोकना चाहा। इस पर वे क्रोधित हो बलराम और श्रीकृष्ण पर टूट पड़े। श्रीकृष्ण का क्रोध खौल उठा। उन्हों ने उस मोथे को उखाड़ कर अंधाधुंध यादवों को मार डाला। इस प्रकार मुनियों के शाप के कारण दावानल की भाँति यादवों का वंश निर्मूल हो गया।

अब सब लोग मर चुके थे। चारों तरफ देखते हुए श्रीकृष्ण ने मन-ही-मन कहा—"पृथ्वी का भार हल्का हो गया!"

समुद्र-तट पर योग-समाधि में बैठकर बलराम ने अपने प्राण त्याग दिये। इस दृश्य को स्वयं श्रीकृष्ण ने देख लिया। तब वे एक पीपल के वृक्ष के तने पर दाईं जाँघ पर बायाँ पैर रख कर बैठ गये। जर नाम के एक शिकारी ने श्रीकृष्ण के बाएँ लाल पैर को कोई जानवर समझा और उस पर बाण चलाया। यादवों के मूसल को घिसाकर बचे लोहे के टुकड़े से उस बाण की कील बनी थी।

बाण चलाकर वह शिकारी दौड़ता हुआ उस स्थान पर पहुँच गया। उसने देखा कि वह जिसको जानवर समझा था, वह एक मनुष्य का पाँव है। उसने श्रीकृष्ण के प्रति निवेदन किया—"महाशय, मुझे बहुत खेद है। मुझसे हिमालय जैसी भूल हुई। मुझे क्षमा कर दीजिएगा?"

श्रीकृष्ण ने जर को समझाया—"तुम चिंता मत करो। वही हुआ, जो मैं चाहता था!" फिर श्रीकृष्ण ने उसे रवाना कर दिया।

इस बीच दारुक रथ पर सवार हो श्रीकृष्ण की खोज में वहाँ आ पहुँचा। श्रीकृष्ण को देख रथ से उतर पड़ा और उनके पास गया। श्रीकृष्ण ने दारुक से कहा—"तुम जाकर सब लोगों को समाचार दो—हमारे वंश के सब लोग मर चुके हैं। बलराम ने भी देहत्याग किया है और मैं यहाँ इस स्थिति में हूँ। आप सब लोग द्वारका को छोड़ दीजिए। मेरे शरीर-त्याग के पश्चात् समुद्र द्वारका को डुबा देगा। मेरे माता-पिता तथा अन्य लोग इन्द्रप्रस्थ जाकर अर्जुन के आश्रय में रहें। इस घटना को भूल कर अब तुम ज्ञान-निष्ठा में अपना शेष जीवन बिताओ।"
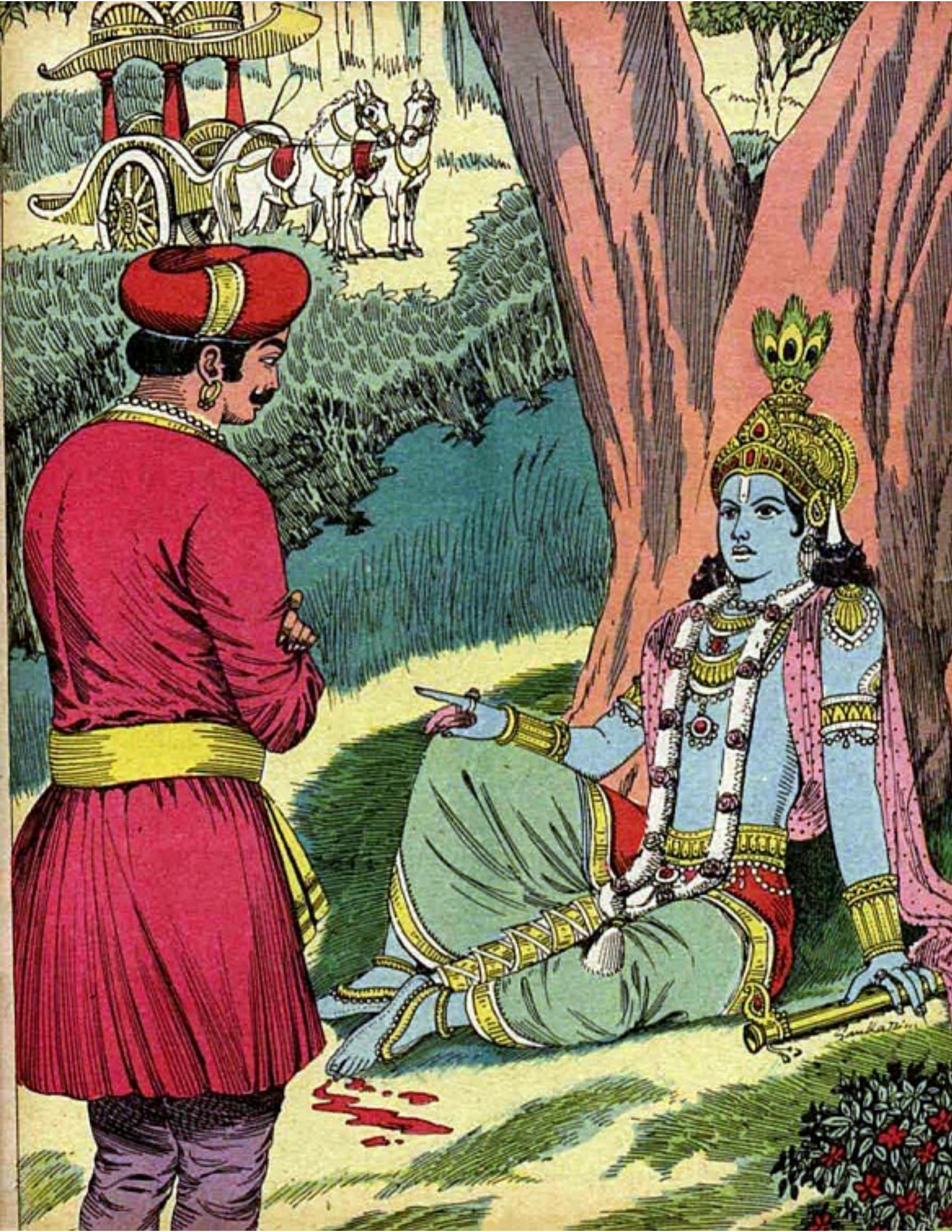
दारुक ने श्रीकृष्ण की प्रदक्षिणा की और व्यथित हृदय से द्वारका लौट गया । वहाँ पर रोते हुए उग्रसेन तथा वसुदेव के चरणों में गिर कर यादवों की मृत्यु का समाचार सब को सुनाया । तब सभी लोग छाती पीटते हुए यादवों की मृत्यु के स्थान पर पहुँचे । वसुदेव, देवकी तथा रोहिणी ने अपने पुत्र बलराम तथा श्रीकृष्ण की खोज की । लेकिन उनके शरीर कहीं उनको दिखाई न दिये । इस पर उनके वक्ष फट गये और वहीं पर उन्होंने प्राण त्याग दिये ।

यादवों की पत्नियों ने अपने पतियों के शरीरों के साथ सहगमन किया । बलराम की पत्नियाँ भी उसकी चिता पर भस्म हो गईं । वसुदेव और श्रीकृष्ण की पत्नियों ने भी अन्य यादव स्त्रियों का अनुकरण किया ।

इसके बाद अर्जुन वहाँ पहुँचा और उसने अपने रिश्तेदारों की अन्त्येष्ठि-किया संपन्न की । उसी समय द्वारका नगरी समुद्र में डूब गई । केवल एक मंदिर जल पर स्पष्ट दीखता हुआ खड़ा रहा ।

जीवित बची स्त्रियों, बच्चों तथा वृद्धों के साथ अर्जुन इन्द्रप्रस्थ पहुँचा । उसने वज्र का राज्याभिषेक किया । अर्जुन ने वज्रको श्रीकृष्ण का संदेश सुनाया—"अब तुम ज्ञान-निष्ठा में अपना समय बिता दो ।" फिर कहा—"महाभारत के युद्ध से अब जो सबक़ मिला है, उसको हमेशा मन में रखना । न्याय-अन्याय की लड़ाई में न्याय ही की हमेशा जीत होती है । न्याय का पक्ष कभी न छोड़ना ।" फिर पांडव द्रौपदी के साथ महाप्रस्थान के लिए चल पड़े ।

श्रीकृष्ण के निर्वाण के समय वहाँ पर ब्रह्मा, इन्द्र, अन्य देवता, प्रजापति सिद्ध, अप्सराएँ तथा विद्याधर आ पहुँचे । उनके विमानों से सारा आकाश भर गया । विमानों से पुष्प-वृष्टि हुई । श्रीकृष्ण ने दिव्य विष्णुरूप धारण किया । अपने दर्शन के लिए आए सभी लोगों की ओर श्रीकृष्ण ने एक बार देखा और सत्य, धर्म, धृति, श्री तथा कीर्ति के साथ वैकुण्ठ की ओर प्रयाण किया ।

(समाप्त)

मंत्री की युक्ति

प्राचीन काल में अरब देश में एक सुलतान था । वह राजकाज़ों के प्रति बहुत लापरवाह रहता था और अपने ही सुखोपभोगों में डूबा रहता था । इस कारण से राज्य की हालत एकदम बिगड़ गयी ।

अधिकारी भी सारे आलसी बन गये; उद्योग व व्यवसाय भी नष्ट हो गये । प्रजा के जीवन में मायूसी छा गयी ।

सुलतान के पास अनेक मन्त्री थे । उनमें से कुछ सुलतान की तरह ही सुख-विलास में डूब गये । शेष मन्त्रियों में राज्य की दुर्दशा के प्रति चिन्ता थी; लेकिन वे इस डर से चुप रह गये कि इस ओर सुलतान की दृष्टि आकृष्ट करने पर शायद उन से वह नाराज़ हो जाएँ ।

आखिर मन्त्रियों में से एक ने सुलतान को सावधान करने की एक तरक़ीब सोची । एक दिन सुलतान के साथ वह उद्यान में सैर करने निकल पड़ा । लौटते वक्त अँधेरा छा गया और उन्हें एक उल्लू के चिल्लाने की आवाज़ सुनायी दी । आवाज़ सुनकर मन्त्री रुक गया और सावधानी से वह उस ध्वनि की ओर ध्यान देने लगा ।

आश्चर्य में आकर सुलतान ने मन्त्री से पूछा, "मन्त्री महोदय, इतने ध्यान से क्या सुन रहे हैं?"

"हुज़ूर! दो उल्लू आपस में बात कर रहे हैं; मैं उन्हीं की बातचीत सुन रहा हूँ ।" मन्त्री ने जवाब में बता दिया ।

"याने कि तुम उल्लुओं की भाषा समझते हो?" सुलतान ने पूछा ।

"जी हाँ हुज़ूर!" कहकर मन्त्री फिर थोड़ी देर आवाज़ सुनता रहा । फिर वह बोला, "हुज़ूर, अब चलिए आगे ।"

"क्यों? उल्लू क्या बात कर रहे हैं?" सुल्तान ने फिर पूछा ।

"हुज़ूर! कृपया इनकी बातचीत आप को

निर्मला साहा

सुनाने के लिये मुझपर दबाव न डालिये । ये तो मूर्ख पक्षी हैं । इनकी बातों पर गौर नहीं करना चाहिये ।" मन्त्रीने सुझाया ।

"पक्षी जो मूर्खों की सी बातें कर रहे हैं उनको मैं क्यों नहीं सुन सकता हूँ? मुझे भी सुनाओ न?" सुलतान ने फिर ज़ोर लगाया ।

"मैं खुद ही उस सफेद झूठ को नहीं सुन पा रहा हूँ । क्या आप वे बातें सुन कर सहन कर सकेंगे?" मन्त्री ने पूछा ।

"यदि ऐसी बात हो, तो हम उन उल्लुओं को कोई दण्ड देंगे । अब तो सुनाओ न!" सुलतान ने अनुरोध किया ।

"तब तो सुनिए ही । ये उल्लू परस्पर अपने बच्चों की शादी रचाना चाहते हैं । मादा उल्लू की माँ से, नर उल्लू की माँ दहेज़ के रूप में अपने बेटे के लिये पाँच उजड़े हुए गाँव माँग रही है । इस पर मादा उल्लू की माँ कह रही है—पाचँ ही क्यों, दहेज में पचास गाँव भी दे सकती हूँ । नर उल्लू की माँ ने अचरज से पूछा-इतने सारे गाँव तुम कैसे दे सकोगी?—तो मादा उल्लू की माँ ने क्या जवाब दिया मालूम है? उसने कहा कि—इस हमारे सुलतान के राज्य में उजड़े गाँवों की क्या कमी?" मन्त्री ने सहमते हुए कह डाला!

यह सुनकर सुलतान मौन रह गया । उसने भाँप लिया कि राज्य की दुर्दशा का परिचय देने के लिये ही मंत्री ने यह मनगढन्त कहानी बतायी है ।

फिर थोड़ा और आगे बढ़ने पर मन्त्री ने सुलतान से भोलापन दिखाते हुए पूछा, "हुजूर, ऐसी अफवाह पैदा करनेवाले दुष्ट को अब मैं कैसी सज़ा दूँ?"

"उसने जो सच्ची बात कही है, उसके लिये उसे दण्ड देना क्या उचित होगा? मैं तुम को आज ही 'प्रधान मंत्री' पद दे रहा हूँ । अब तुम ऐसा प्रबन्ध करो, जिस से कि उस नर उल्लू को दहेज़ में कोई भी गाँव प्राप्त न हो!" सुलतान ने मन्त्री को आदेश देते हुए कहा ।

उसी दिन से सुलतान में बड़ा भारी परिवर्तन आ गया । उसने अपने सुख-विलासों का त्याग कर राज काज में पूरा मन लगाया । शीघ्र ही उद्योग व्यवसाय, पेशे व खेतीबाड़ी की काफी वृद्धि हुई और सारे राज्य में अमन-चैन की तूती बोलने लगी ।

किवाड़ की चिटकनी

रामभद्र नाम का एक आदमी नहाने के लिए स्नान-गृह में पहुँचा और भीतर से किवाड़ की चिटकनी लगा दी । नहाने के बाद उसने किवाड़ खोलना चाहा, पर बड़ी कोशिश के बाद भी चिटकनी नहीं खुली । वह कहीं अटक गई थी । भाग्यवश उसको अन्दर एक कोने में एक हथौड़ी दिखाई दी । उसने हथौड़ी से चिटकनी पर दे मारा, तब वह खुल गई ।

स्नानागार से बाहर आकर रामभद्र ने अपनी पत्नी और बच्चों से कहा—"सुनो, हमारे गुसलखाने की चिटकनी अटक जाती है । बंद करना तो बनता है, पर खोलने में दिक्कत होती है । इस घर में सब से ताकतवर मैं ही हूँ । हथौड़ी का उपयोग करने पर भी चिटकनी को खोलना मेरे लिए मुश्किल हो गया । तुम लोगों की बात ही क्या? इस लिए उसकी मरम्मत होने तक तुम लोग किवाड़ की चिटकनी मत लगाया करो ।"

यह बात सुन कर रामभद्र का छोटा लड़का दौड़ा दौड़ा बढ़ई के घर पहुँचा । उसे मालूम हुआ कि बढ़ई पड़ोस के गाँव में गया है और एक हफ़्ते बाद ही लौटेगा ।

आदत को बदलना आसान थोड़े ही होता है? रामभद्र के बड़े लड़के ने भूल से स्नान-गृह की चिटकनी चढ़ा दी । उसे खोलने में उसे आधा घंटा जोर लगाना पड़ा । उसके बदन से पसीना छूटा । तब फिर दुबारा उसने चटकनी चढ़ाए बिना ही स्नान कर लिया । उस दिन से परिवार के सारे चिटकनी के बारे में सावधान रहने लगे ।

इस घटना के चार दिन बाद रामभद्र के घर पर कृष्णचन्द्र नाम का एक रिश्तेदार आया । वह पतला और कमज़ोर था । घर में कदम रखते ही उसने कहा—"बाहर बड़ी कड़ी धूप
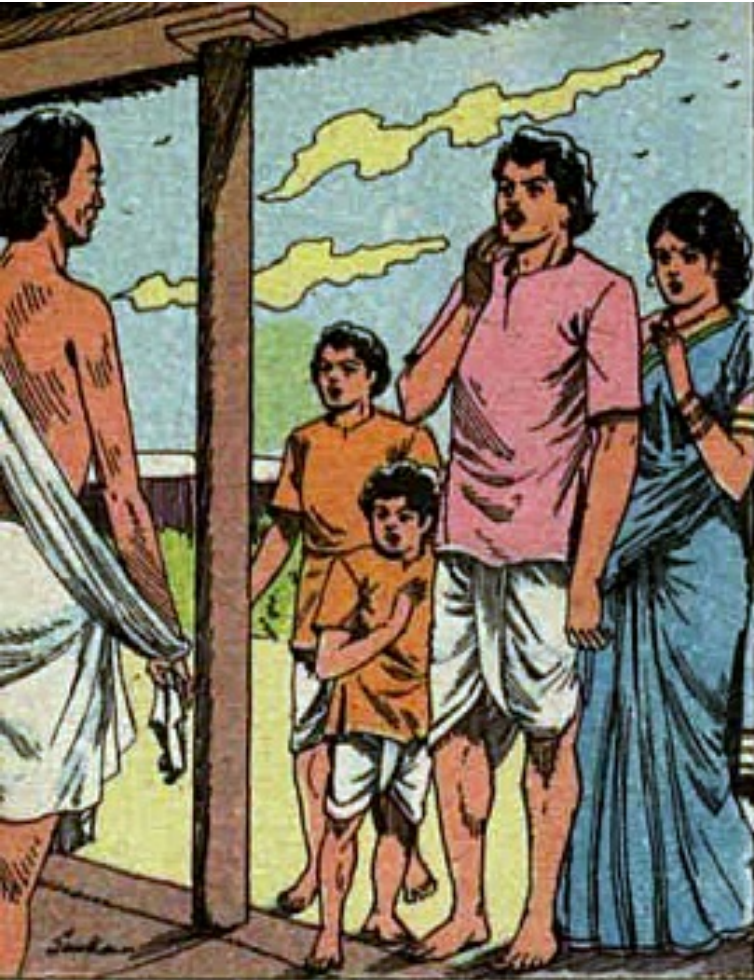
है । सारे बदन से पसीना छूट रहा है । सब से पहले नहा लेना चाहिए, तभी थकावट दूर होगी ।'' कहते हुए कृष्णचन्द्र सीधे स्नानागार में घुस गया । इसके तुरन्त पश्चात् किवाड़ पर चिटकनी चढ़ाने की आवाज़ सुनाई दी ।

इस आवाज़ को सुन कर रामभद्र घबरा गया । अपने रिश्तेदार को गुसलखाने की चिटकनी न लगाने की सूचना वह न दे सका था । अब वह अगर स्नान-गृह से बाहर न निकल सका तो किवाड़ तोड़ने की नौबत आएगी ।

''जो भी हो, हथौड़ी तो गुसलखाने में है ही । इस लिए कृष्णचन्द्र को अभी से सावधान कर दें तो अच्छा ।'' रामभद्र ने कहा ।

रामभद्र की पत्नी बोली—''अजी, किवाड़ की चिटकनी न खुली तो वे आप होकर न पुकारेंगे? अभी से उनको क्यों भला घबराने दें?''

इस बात को लेकर परिवार के सब लोग घबरा ही रहे थे । इतने में स्नान-गृह के भीतर से फिर चिटकनी की आवाज़ सुनाई दी । कृष्णचन्द्र किवाड़ खोल कर स्नानागार से बाहर निकला । उसने कहा—''बाप रे बाप! अब मेरे प्राण कुछ शीतल हो गए ।''

रामभद्र के परिवार के सदस्यों के आश्चर्य की कोई सीमा न रही । सभी कृष्णचन्द्र की ओर बड़े विस्मय से देखने लगे । तब उसने पूछा—''भाई, बात क्या है? गुसलखाने के सामने इकठ्ठे हो तुम सब लोग मुझे इस तरह देख रहे हो, जैसे में कोई भूत हूँ?''

''जी नहीं, ऐसी कोई बात तो नहीं है । नहाने में आपको कोई तकलीफ तो नहीं हुई?'' रामभद्र ने कुछ संकोच करते हुए पूछा ।

कृष्णचन्द्र ने आश्चर्य से पूछा—''यह भी खूब! लोग यात्रा की तकलीफों के बारे में पूछते हैं, तुम स्नान की मुसीबत के बारे में पूछ रहे हो! मेरी समझ में नहीं आता, स्नान करने में भला क्या मुसीबत हो सकती है?''

यह प्रश्न सुन कर रामभद्र अपनी गलती समझ कर चुप बैठ गया । उसने मन-ही-मन सोचा कि शायद किवाड़ की चटकनी अपने आप ठीक हो गई हो । उस

दिन रात को रामभद्र ने स्नान करते समय किवाड़ पर चिटकनी चढ़ा दी । लेकिन उसे खोलने में उसे बहुत परेशान होना पड़ा ।

कृष्णचन्द्र ने गुसलखाने के पास जाकर पूछा—"अरे रामभद्र, भीतर हथौड़ा चलाने की यह आवाज़ कैसी? आखिर अन्दर तुम क्या कर रहे हो?"

रामभद्र बड़ी मुश्किल से किवाड़ खोल कर स्नान-गृह के बाहर आया और बोला—"स्नानागार के किवाड़ की चिटकनी बिगड़ गई है । उसकी मरम्मत करने के लिए बढ़ई गाँव में नहीं है । चिटकनी खोलना मुश्किल मान कर उसे चढ़ाए बिना ही हम लोग इधर कुछ दिनों से स्नान कर रहे हैं । इधर चार दिनों से आप दुपहर को चिटकनी लगा कर खोल रहे हैं । इस लिए मैंने सोचा कि चिटकनी ठीक हो गई है । लेकिन मेरी समझ में नहीं आता कि आपकी क़िस्मत से यह जल्दी खुलती है या आप दुबले होते हुए भी ताक़त रखते हैं? चिटकनी खोलना मेरे लिए अब भी बहुत मुश्किल ही मालूम हो रहा है!"

"ओह, यह बात है!" कहते हुए कृष्णचन्द्र ठहाके मार कर हँसने लगा ।

"आप हँस क्यों रहे हैं? आखिर कारण तो बता दीजिएगा ।" रामभद्र ने पूछा ।

अपनी हँसी को रोकते हुए कृष्णचन्द्र ने कहा—"भई, मैं तो दुबला-पतला आदमी हूँ । अपने घर में तो सब लोग मेरा मज़ाक ही उड़ाया करते हैं! हमारे यहाँ के स्नान-गृह की चिटकनी भी अड़ गई है । परिवार के बाकी सब लोग तो उसे बड़ी आसानी से खोल देते हैं, मेरे लिए वह टेढ़ी खीर है । मैं मारे डर के चिटकनी चढ़ाए बिना उसके चढ़ाने जैसी आवाज़ मात्र कर देता हूँ, ताकि सब लोग मेरी असमर्थता की खिल्ली न उडावें । मेरे लिए अब यही आदत-सी हो गई है । आज दोपहर को भी मैंने ऐसा ही किया ।" कहते हुए कृष्णचन्द्र पुनः हँसने लगा ।

कृष्णचन्द्र के मुँह से चिटकनी का रहस्य सुनकर रामभद्र के परिवार के सब लोग हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये ।

गरीब किसान

किसी गाँव में एक किसान रहता था । वह और उसकी पत्नी दोनों बड़ी धार्मिक वृत्ति रखते थे । मगर घर में बच्चों की संख्या अधिक होने का कारण कड़ी मेहनत करने के बावजूद वे बच्चों को केवल कांजी मात्र दे सकते थे । एकाध जून कभी दाल-रोटी जुगाड़ सके तो समझो, घर में दावत ही हो गयी!

इस प्रकार दाने-दाने के लिये तरसते हुए भी वे अपने घर आये लोगों को कुछ खिलाये बग़ैर लौटाते नहीं थे । अपनी कांजी में से थोड़ी-बहुत बड़े प्यार से अतिथि को भी पिलाते थे ।

एक दिन उस परिवार के लोग खाने के लिये बैठे ही थे, कि दरवाज़े पर एक भूखा भिखारी आ पहुँचा । किसान और उसकी पत्नी ने अपने हिस्से में से आधी आधी कांजी निकालकर उस भिखारी को पिलायी । कांजी पीकर भिखारी को ऐसा अनुभव हुआ, मानों वह अमृत ही पी गया हो । पहले मरणासन्न दिखनेवाले उसके चेहरे पर रौनक आ गयी । उसने किसान से कहा, "तुम जैसे पुण्यात्माओं को मैं ने कहीं देखा नहीं है । जिस बर्तन में तुम ने यह कांजी पकायी वह बर्तन मेरे पास लाओ, मैं उसे 'अक्षयपात्र' में बदल दूँगा ।"

किसान की पत्नी ने बर्तन लाकर भिकारी के हाथों में धर दिया । उस पर हाथ रखकर भिखारी ने कुछ मन्त्र पढ़े । उस पर ढक्कन रख दिया और कहा, "आइन्दा तुम लोगों को खाने के लिये तरसने की नौबत नहीं आएगी । राजा की रसोई में बननेवाला प्रत्येक व्यंजन तुम्हें इसी बर्तन में प्राप्त होगा ।" बर्तन किसान को लौटाकर उसी क्षण भिखारी वहाँ से चला गया ।

किसान-दम्पति ने भिखारी की बातों पर विश्वास तो नहीं किया, मगर उन्हें एक आशीर्वाद के रूप में अवश्य माना । उसी

[२५ वर्ष पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी]

रात को किसान की पत्नी ने कांजी बनाने के लिये ज्यों ही बर्तन का ढक्कन उठाया, तो उसके भीतर से लार टपकाने वाली रसोई की सुगन्ध निकली । अच्छे अच्छे पदार्थों से बर्तन भरा हुआ था । सब ने भर पेट खाना खा लिया । फिर भी पदार्थ घटे नहीं । वास्तव में, सचमुच ही वह राजा का भोजन था!

उस दिन से किसान दम्पति और उनके बच्चे बर्तन की कृपा से राज-भोज करने लगे । इतना ही नहीं, अपने घर आये अतिथियों को भी वे वही भोजन खिलाने लगे । उन अतिथियों से किसान इतना ही निवेदन करता था कि, "महाशयों, हम जो भोजन खिला रहे हैं, उसको चुपचाप खा लीजिये, परन्तु उसके सम्बन्ध में हम से किसी प्रकार के प्रश्न कृपया नहीं पूछिये ।"

किसान के घर भोजन करने वाले लोग अन्य स्थानों में कहा करते थे, "खाना यदि खाना है, तो अमुक किसान के घर का ही खाओ ।"

इधर किसान के घर की यह हालत थी, तो उधर राजा की रसोई में बने पदार्थ घटने लगे थे । इस बात को सब से पहले राजा के रसोइये ने भाँप लिया । राज-परिवार के लिये आवश्यक पदार्थों से कहीं अधिक ही वह पकाता था, फिर भी पदार्थ कभी-कभी पर्याप्त नहीं होते थे । पात्र भर खीर बना कर रख देता, तो परोसते समय उसे खाली पाता था! हर वक्त यही हालत होती रही; इसलिये रसोइये ने सोचा कि यह ज़रूर किसी चोर की

करतूत है । मगर वह चोर का पता नहीं लगा सका । आख़िर उसने राजा को यह विचित्र समाचार सुनाया । पहले तो राजा को यक़ीन नहीं हुआ, मगर जाँच करवाने पर पाया कि सच ही बर्तनों में से पकाये हुए पदार्थ घटते जा रहे हैं!

यह बात राजा ने मन्त्री को सुनायी । मन्त्री ने भी ख़ुद जाँच कर के समाचार सही पाया! राज परिवार की कोई बात गुप्त नहीं रह पाती । सारे नगर में पदार्थ घटते जाने का समाचार फैल गया । दूसरी ओर यह ख़बर भी फैल रही थी, कि एक किसान के घर हररोज़ अतिथियों को बढ़िया भोजन खिलाया जाता है । इन दोनों घटनाओं का एक दूसरे से ज़रूर सम्बन्ध होगा, यह शंका राजा व मन्त्री

के मन में घर कर गयी । ज़रूर राज-रसोई के पदार्थ किसान के घर पहुँच रहे हैं ।

जाँच पड़ताल करवाकर मन्त्री ने राजा से कहा, "महाराज, मैं ने किसान के बारे में पूछताछ की । वह हमारे नगर के छोर पर एक झोंपड़े में रहता है । अत्यन्त ग़रीब है वह । मगर लोग कहते हैं कि वह बिलकुल देवता है । यह बात भी सच नहीं लगती, कि वह हर रोज़ राजा के रसोईघर में प्रवेश कर के पदार्थ चुरा ले जाता होगा । और यदि वह गुप्त रूप से राजमहल में घुस सकता हो, तो सिर्फ़ खाने के पदार्थ ही क्यों चुराये? अन्य क़ीमती चीज़ें, आभूषण वगैरह भी तो चुरा सकता है न वह? उसीसे उसका सारा जीवन आराम से बीत सकता है । हर जून भोजन चुराने के लिये राजमहल के भीतरी भाग में रसोई-घर में पहुँचना साधारण बात नहीं है ।

"फिर भी यदि हम एक दिन उसके घर जाकर वहाँ खाना खा लें, तो असली बात का पता चल सकता है । कहा जाता है, कि उसके घर में जो भी अतिथि जाता है, उसे खाना खिलाये बगैर लौटाता नहीं है वह किसान!" राजा ने अभिप्राय व्यक्त किया ।

इस योजना के अनुसार राजा और मन्त्री भेंस बदलकर, बड़ी बड़ी पगड़ियाँ सिर पर रखकर और हाथों में छड़ियाँ लेकर सब की आँख बचाकर पैदल ही राजमहल से बाहर निकलकर किसान के घर की ओर चलने लगे । निकलने से पहले अपनी पाकशाला में कौन पदार्थ पक रहे हैं इसका पता उन्होंने कर लिया था ।

किसान के घर सब लोग खाने के लिये बैठ ही रहे थे । तभी दो आजानुबाहु व्यक्ति वहाँ पहुँचे और बोले, "महाशय, हम पड़ोस गाँव के निवासी हैं । अभी इस दुपहार के वक्त यहाँ पहुँच रहे हैं । क्या इस वक्त थोड़ा खाना हमें खिला सकते हैं आप?"

किसान ने उठकर बड़े स्नेह से उनका स्वागत किया । खाने के लिये पत्तल डलवाकर उसने उन मेहमानों को खाना परोसने का आदेश दिया और कहा, "महानुभावों, हम जो कुछ खिलाएँगे उसे खाकर चले जाइये; मगर हम से किसी प्रकार के प्रश्न न पूछियेगा ।"

पत्तलों पर परोसे जानेवाले पदार्थ देखकर ही दोनों को मालूम पड़ा कि, ये तो महल के रसोईघर के ही पदार्थ हैं । वैसे वे दोनों भोजन करने के इरादे से तो नहीं गये थे, इसलिये उन्होंने किसान से पूछा, "बड़े बड़े संपन्न परिवारों के लिये भी असाध्य ऐसा यह भोजन तुम लोगों को कैसे प्राप्त हुआ है?"

"कृपया आप मुझ से यह प्रश्न न पूछिये ।" किसान ने हाथ जोड़कर कहा ।

"इसका जवाब सुनने पर ही हम खाना खाऐंगे । वरना ऐसे ही चल देंगे ।" दोनों ने ज़िद पकड़ी ।

विवश होकर किसान ने सारा वृत्तान्त सुना दिया । सुनने पर राजा क्रोधावेश में आ गया । दोनों झट उठ खड़े हुए और अपनी छड़ी से राजा ने वह मिट्टी का बर्तन तोड़ डाला और दोनों वहाँ से चल दिये ।

बर्तन के टुकड़े समेटते हुए किसान की पत्नी रोने लगी ।

"अरी चुप भी हो जाओ! हम ने सदा थोड़े ही राज-भोज खाया है? कांजी या माँड तो हमारे लिये है ही । तुम चिन्ता मत करो ।" किसान ने उसे सान्त्वना दी ।

मिट्टी का बर्तन तोड़कर राजा व मन्त्री राजमहल पहुँचे । मगर उस वक्त का खाना रसोई घर में नहीं था ।

"महाराज, चूल्हे पर रखते ही भोजन पदार्थ बर्तनों से गायब हो रहे हैं । चाहे तो आप खुद जाँच कीजिये । बर्तनों पर बाहर से कालिख लगी हुई है, पर भीतर से वे साफ हैं ।

प्रत्येक पात्र को पाँच-छः बार पदार्थों से भर कर मैं ने चूल्हों पर चढाया; मगर हर बार वे सब खाली होते गये हैं ।" रसोइये ने कहा ।

राजा ने किसान के घर भी खाना नहीं खाया था, इसलिये मन्त्री ने पूरे राज परिवार के लिये अपने घर से खाना भिजवाया । मगर राजमहल पहुँचते ही सारे बर्तन खाली हो गये, पदार्थ सारे के सारे गायब!

अब जाकर राजा को पता चला कि उसने किसान से जो अन्याय किया, उसी का फल उसे भुगतना पड़ रहा है । फिर क्या था! मन्त्री को साथ लेकर तुरन्त वह किसान के घर पहुँचा और उसके पैरों पर गिरकर क्षमा-प्रार्थना करते हुए बोला, "मैं ने क्रोधावेश में आकर तुम्हारे साथ अन्याय

किया है । उस अपराध के लिये मुझे क्षमा कर दो । तुम्हारा मिट्टी का बर्तन मैं ने तोड़ दिया है, इस के परिहार के रूप में मैं तुम्हें काफी ज़मीन इनाम में दूँगा और और आज से हमारे रसोई घर में बने पदार्थों में से आधे तुम्हारे घर भिजवाये जायेंगे । मुझे व मेरे परिवार को भूखा मत मारो । मेरे रसोई-घर में बर्तन में पदार्थ टिकने ही नहीं है । कितने भी बर्तन भर दो, वे खाली हो जाते हैं । कल मंत्री के घर से मेरा भोजन आया, तब मैं खाना खा सका । मैंने तुमहारे प्रति जो अन्याय किया, उसी की सज़ा मुझे भुगतनी पड़ रही है । जब तक मेरे अपराध के लिए तुम क्षमा न करोगे, तब तक मैं यहीं रहूँगा । राजमहल नहीं जाऊँगा । अपने राजा की इतनी प्रार्थना स्वीकार न करोगे मित्र? बोलो, दया करो मुझे पर!"

घबराते हुए किसान बोला, "जान बूझकर मैंने आप को कोई हानि नहीं पहुँचायी है । बर्तन टूटने से मेरी पत्नी रो रही थी, मगर मैं ने उसे समझाया कि हम पहले जैसे ही कांजी या माँड पीकर दिन काटेंगे । आप के प्रति यदि कोई अन्याय हुआ हो, तो विश्वास कीजिये कि वह मेरी ओर से नहीं हुआ है । आप को यदि कोई क्षमा कर सकते हैं, तो वही महानुभाव, जिन्हों ने यह बर्तन हमें दे दिया है । अब वह कहाँ चला गया है मुझे कुछ भी मालूम नहीं । मैं अभी उसको ढूँढ़ने के लिए निकलता हूँ । मैं उसकी सूरत ज़रूर जानता हूँ । पर उसे ढूँढ़ना भी हो तो कहाँ ढूँढें । उस दिन बर्तन देकर वह किस दिशा में गया यह भी मुझे मालूम नहीं । आप मेरी मदद करेंगे तो उसका पता लगाने की हम भरसक कोशिश करेंगे ।"

राजा ने जब यह बात कही, कि उस के रसोई घर से आधे पदार्थ किसान के घर पहुँचाये जायेंगे,तब से राजमहल के रसोई के पदार्थ बर्तनों में वैसे ही रहने लगे । राजा से प्राप्त ज़मीन के कारण किसान सुखपूर्वक अपना जीवनयापन करने लगा । मगर राजमहल से दोनों वक्त का खाना उसे मिलता ही रहा । इस प्रकार उसकी तीन पीढ़ियों तक उस परिवार को राज-महल से भोजन प्राप्त होता रहा ।
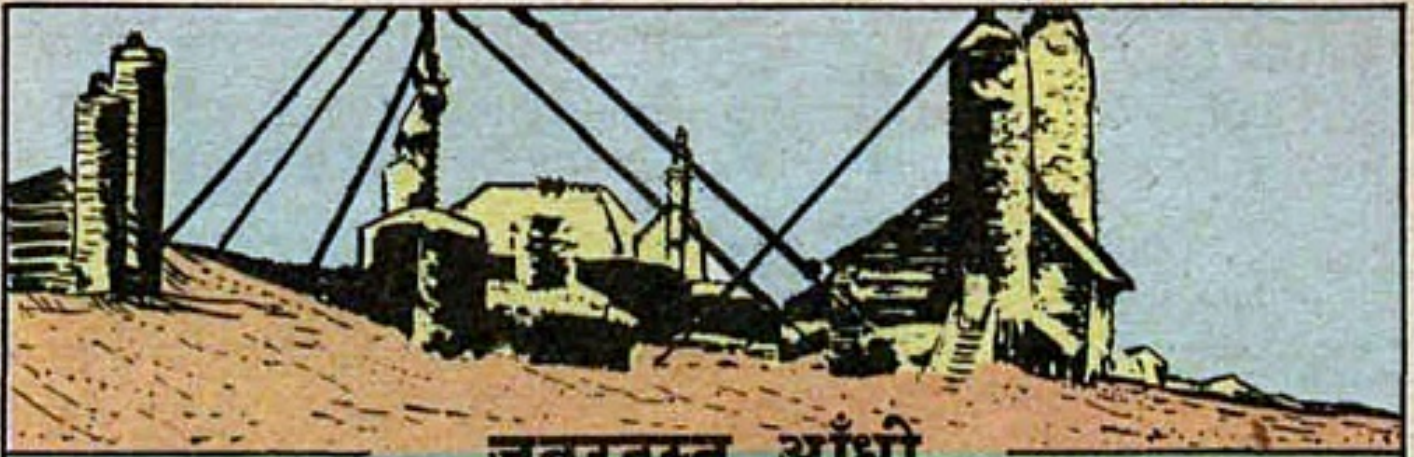
जबरदस्त आंधी

अमेरिका के न्यू हाम्पशायर में ६,२६२ फुट की ऊंचाई पर वाशिंग्टन आब्जरवेटरी है। इस वायुमण्डल अनुसन्धान केन्द्र के प्रतिमानों के अनुसार विश्वकी सब से अधिक तेज तूफानी हवाएं फी घंटा २३१ मील की गति से १९३४ में चली थी।

दक्षिण ध्रुव से २६४ मील की दूरी पर ही कुछ पौधे दिखाई देते हैं। वहां के पहाड़ों पर लिकेन जाति के, फूल न देने वाले, काई जैसे छोटे पौधे पाये जाते हैं।

CHANDAMAMA

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ मई १९९० के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

M. Natarajan

M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ मार्च १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जनवरी के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : संगीत की आराधना!

द्वितीय फोटो : सुख की कामना!!

प्रेषक : दीपक कुमार राय, आर्या स्टील प्रा. लि., रामपुर (रांची), बिहार

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३६-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीज, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास-६०००२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिए :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास-६०००२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
Rule 8 (Form VI), Newspapers (Central) Rules, 1956

1. *Place of Publication*	'CHANDAMAMA BUILDINGS' 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
2. *Periodicity of Publication*	MONTHLY 1st of each calendar month
3. *Printer's Name*	B.V. REDDI
Nationality	INDIAN
Address	Prasad Process Private Limited 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
4. *Publisher's Name*	B. VISWANATHA REDDI
Nationality	INDIAN
Address	Chandamama Publications 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
5. *Editor's Name*	B. NAGI REDDI
Nationality	INDIAN
Address	'Chandamama Buildings' 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
6. *Name and Address of individuals who own the paper*	CHANDAMAMA PUBLICATIONS PARTNERS: 1. Sri B. VENKATRAMA REDDY 2. Sri B.V. NARESH REDDY 3. Sri B.V. SANJAY REDDY 4. Sri B.V. SHARATH REDDY 5. Smt. B. PADMAVATHI 6. Sri B.N. RAJESH REDDY 7. Smt. B. VASUNDHARA 8. Kum.B.L. ARCHANA (Minor) 9. Kum.B.L. ARADHANA (Minor) (Minors admitted to the benefits of Partnership) 'Chandamama Buildings' 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026

I, B. Viswanatha Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

B. VISWANATHA REDDI
Signature of the Publisher

1st March 1990

CRUNCHY, MUNCHY SWEETS

The coconut cookie treat!

THE FINEST, WIDEST RANGE
nutrine
India's largest selling sweets

nutrine
COOKIES